इसरो isro

नोदन मुकुर

अंक 10
वर्ष 2021-22 (II)

द्रव नोदन प्रणाली केंद्र की गृह पत्रिका

आज़ादी का अमृत महोत्सव

मेरी आवाज़ ही पहचान है...

अध्यक्ष, इसरो का आधिकारिक दौरा

भारतरत्न, डॉ बी आर अंबेडकर जयंती समारोह

वलियमला

बेंगलूरु

नोदन मुकुर

संरक्षक
डॉ. व. नारायणन

मुख्य संपादक
डॉ. ए.के. अशरफ

उप संपादक
श्री सूर्य मणि त्रिपाठी

प्रबंध संपादक
मनोज कुमार

संपादक मंडल
श्रीधर पाणिग्रही
डॉ. दीपक कुमार अग्रवाल
रंजु चंद्रन
नरेंद्र कुमार झा
रामप्रसाद बी
गौरव शर्मा
योगेश जामठे
आशीष मिश्रा
विकास शर्मा
प्रसून कुमार नाग
खालिद रशीद
अर्पिता दास
सुमित बुधवार
संदीप कुमार
साई तेजा दसरी
अमृता बिश्वास
ऐश्वर्य मिश्रा
संदीपन दास

संपादन सहयोग
पी अनुश्री
श्रीजा आर
कुमारी शालू
अभिमन्यु कुमार

मुख पृष्ठ
प्रदानकर्त्ता: अजितन ए
वरि. तकनीशियन-बी, एलपीएससी, वलियमला

मुद्रण
मेसर्स भानु ऑफसेट, तिरुवनंतपुरम

प्रकाशित सामग्रियों में लेखकों/रचनाकारों द्वारा अभिव्यक्त विचार उनके अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि संपादक मंडल उनसे सहमत हो।

द्रव नोदन प्रणाली केंद्र
वलियमला, तिरुवनंतपुरम - 695547
दूरभाष: 0470-2567704, 2567531

द्रव नोदन प्रणाली केंद्र
80 फीट रोड, एच ए एल स्टेज-2, बेंगलूरु - 560008

संपादकीय

यह बेहद खुशी की बात है कि बहुत कम अंतराल पर हमारे केंद्र की हिंदी गृह-पत्रिका नोदन मुकुर के 10वें अंक का सफल संकलन एवं संपादन किया गया। मुझे उम्मीद है कि कर्मचारियों एवं उनके परिजनों द्वारा रचित रचनाएँ आप सभी के मन को मोहित कर लेंगी। पिछले अंक से ही ऐसा प्रतीत हो रहा है कि रचानाकारों की लेखनी में मानों पंख लग गए हों। उन्होंने अपनी लेखनी से अपने हृदय के उद्‌गारों को कलात्मक रूप से इस अंक में चित्रित किया है।

हिंदी की व्यापकता एवं सार्वभौमिकता की अनुभूति इस बात से की जा सकती है कि यह भाषा अब दुनिया के विभिन्न देशों में बोली और समझी जाने लगी है। प्रवासी भारतीय जो नये सपनों के साथ विदेश पहुँचते हैं, अपनी भाषा और संस्कृति को अपने साथ लेकर जाते हैं और इनसे उनका मोह कदापि भंग नहीं होता। विदेशी धरती पर अपनी भाषा और संस्कृति से उनका लगाव और प्रगाढ़ हो जाता है। भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों से वहाँ प्रवास कर रहे सभी भारतीयों के बीच आत्मीयता स्थापित करने एवं आपस में अपनी भावनाओं का आदान-प्रदान करने के लिए हिंदी एक सेतु का काम करती है। चाहे वह भारत के किसी भी प्रांत से हों, वहाँ वे अन्य भारतीय मूल के लोगों के साथ हिंदी भाषा में बड़ी ही सहजता एवं सरलता से संवाद एवं आत्मीय संबंध स्थापित कर लेते हैं। हिंदी भाषा का स्वरूप उपमहाद्वीपीय है। यह भाषा केवल भारत में ही नहीं बोली जाती, बल्कि पड़ोसी देशों में भी यह भाषा दशकों से प्रचलन में है - कहीं उर्दू-फारसी के शब्दों को आत्मसात कर, कहीं संस्कृतनिष्ठ शब्दों को अपने में समाहित कर, तो कहीं स्थानीय बोलियों से प्रभावित होकर। हिंदी भाषा की इस व्यापकता से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसमें विश्वभाषा बनने एवं अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत का प्रतिनिधित्व करने की असीम क्षमता है। हम आशा करते हैं कि यह भाषा हम सभी की कोशिशों से ऐसे ही पुष्पित-पल्लवित होती रहेगी तथा अपने माधुर्य से पूरे विश्व को सुवासित करती रहेगी।

द्रव नोदन प्रणाली केंद्र की गृह-पत्रिका "नोदन मुकुर" इस केंद्र में राजभाषा कार्यान्वयन एवं हिंदी के प्रचार-प्रसार में अहम भूमिका निभा रही है। पाठकों से निवेदन है कि वे इस पत्रिका की विषय-वस्तुओं, अभिकल्पना, प्रासंगिकता आदि में निरंतर गुणवत्तापूर्ण सुधार के लिए अपने अनमोल सुझाव देते रहें।

जय हिंद... जय हिंदी।

(डॉ. ए.के. अशरफ)
संपादक

इस अंक में

डॉ. एस सोमनाथ का व्यक्तित्व: एक परिचय	07
मातृत्व	09
चाहत	10
युद्ध से शांति की ओर...	11
स्वर कोकिला: लता मंगेशकर	12
हमारी राजस्थान यात्रा	16
कोरोना से बचाव	19
संस्कृति	22
गज़ल - आज भी जब कोई	23
युद्ध... बचपन और अंहकार	24
मैं अब भी तेरे इंतज़ार में हूँ	25
सागर प्रेम	26
गुरुकुल से आभासी तक - शिक्षा की यात्रा	28
एक महान संत : रामानुजाचार्य जी	33
होली की यादें	34
मेरी पहली बेंगलूरु यात्रा	36
कौन हूँ मै?	37
निराला का 'निरालापन'	38
बंधन	40
मेरा जीवन	41
कर्नाटक के दर्शनीय स्थल	42
मैं भी चल पड़ा	43
रोता हुआ मजाक	44
तकनीकी शब्दावली वर्ग पहेली	45
गोलघर	46
धरती माता	48
हिंदी भाषा का उद्भव	49
सरलता	50
मेरी पत्नी की सौतन	52
स्वर्ण जयंती पुस्तकालय: एक परिचय	54
किस किस से खफा हो जाऊं मैं	57
दहेज-प्रथा समाज का अभिशाप	58
नन्हें कदम	59
कलासृष्टि	60
महापुरुषों द्वारा हिंदी भाषा संबंधी प्रेरक सूक्तियाँ	64

भारत सरकार
अंतरिक्ष विभाग
द्रव नोदन प्रणाली केंद्र
वलियमला पोस्ट
तिरुवनंतपुरम - 695 547, भारत
दूरभाष : 0471 2567257/2567554
फैक्स : 0471 2567242
इमेल : director@lpsc.gov.in

डॉ. वी. नारायणन/ Dr. V. Narayanan
निदेशक/Director

Government of India
Department of Space
Liquid Propulsion Systems Centre
Valiamala P.O.
Thiruvananthapuram - 695 547, India
Telephone : 0471 2567257/2567554
Fax : 0471 2567242
Email : director@lpsc.gov.in

निदेशक की कलम से

मुझे अत्यंत हर्ष है कि द्रव नोदन प्रणाली केंद्र की गृह पत्रिका **नोदन मुकुर** का दसवाँ अंक विविध लेखों, कविताओं, यात्रा-वृत्तांतों, चित्रकारियों के साथ पाठकों के समक्ष उपस्थित है। पत्रिका के इस अंक को मूर्त रूप देने के लिए इस केंद्र के कर्मचारी एवं उनके आश्रित बधाई एवं प्रशंसा के पात्र हैं। इस पत्रिका को इस मुक़ाम तक पहुँचाने में संपादक मंडल ने भी अहम भूमिका निभाई है, जो बेहद प्रशंसनीय है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि केंद्र सरकार के कार्यालयों में राजभाषा हिंदी का कार्यान्वयन हम सभी का संवैधानिक कर्त्तव्य है। इस दिशा में हम सभी अनवरत प्रयासरत हैं। जनवरी 2022 में नराकास द्वारा आयोजित संयुक्त राजभाषा उत्सव 2021-22 के उपलक्ष्य में कई हिंदी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया, जिनमें इस केंद्र के कर्मचारियों ने बड़े उत्साह से भाग लिया और पुरस्कार प्राप्त किया। सभी के सम्मिलित प्रयासों का ही परिणाम है कि राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में हम सभी बड़े ही उत्साह के साथ निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में अग्रसर हैं।

वर्ष 2021 के दौरान द्रव नोदन प्रणाली केंद्र ने कोविड-19 महामारी सहित विभिन्न चुनौतियों का सामना करते हुए तकनीकी संवर्धन, अनुसंधान, प्रबंधन एवं प्रशासनिक क्षेत्रों में कई महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की। वर्ष 2022 के लिए भी हमारे अनुभवी कार्यबल ने वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास कार्यों के लिए कई महत्वपूर्ण लक्ष्य निर्धारित किया है और उन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए वे बड़ी ही निष्ठा एवं लगन से अपने-अपने क्षेत्रों में दायित्वों का निर्वहन कर रहे हैं। आने वाले दिनों में प्रथम मानवरहित मिशन, गगनयान मिशन के लिए अत्यंत अल्पावधि में कई विकासात्मक एवं योग्यता परीक्षण गतिविधियों को संपन्न किया जाना है। हमारे पास चंद्रयान-3 मिशन का भी उत्तरदायित्व है, जिसके लिए लैंडर मॉड्यूल के नोदन प्रणाली का पुनः परीक्षण किया जाएगा। अन्य नवीन मिशनों, यथा आदित्य L1,आई डी आर एस एस-1 (IDRSS-1) और स्पैडेक्स (SPADEX) आदि का संवर्धन किया जा रहा है। 300mN अधारित विद्युत नोदन प्रणाली का टी डी एस-01 मिशन में उड़ान परीक्षण किया जाने वाला है, इसके अतिरिक्त हमें संचार/भारतीय सुदूर उपग्रह/विभिन्न नौवहन उपग्रहों के प्रमोचन के लिए पी एस एल वी/जी एस एल वी मिशनों के लिए नोदन प्रणालियों की आपूर्ति करना है। प्रथम लघु उपग्रह प्रमोचनयान का प्रमोचन भी शीघ्र किया जानेवाला है। सेमीक्रायो इंजन पॉवर हेड टेस्ट आर्टिकल (PHTA) का दूसरा ऐतिहासिक परीक्षण एवं प्रथम समेकित इंजन का निर्माण इसी वर्ष किया जाना है। साथ ही 2022 में ही स्टेज संरचनात्मक परीक्षण, डी स्टेज संयोजन की शुरुआत आदि करने की योजना भी बनाई गई है। C32 के लिए बृहद संवर्धन की गतिविधियाँ एवं इंजन अप-रेटिंग परीक्षण को पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। इस वर्ष ही लॉक्स मीथेन इंजन डिज़ाइन करने की भी योजना है। साथ ही आशा है कि गगनयान मिशन के क्रू-मॉड्यूल के लिए ग्रीन नोदन प्रणाली का संवर्धन पूरा हो जाएगा।

इन सभी तकनीकी संवर्धनों के अलावा, इस वर्ष नई सुविधाओं की स्थापना करने की भी योजना है। यह आशा है कि समेकित क्रायो इंजन विनिर्माण सुविधा, समेकित टाइटेनियम मिश्रधातु टैंक उत्पादन सुविधा, प्रवाह नियंत्रण वाल्वों एवं नियंत्रण प्रणाली के लिए समेकित प्रयोगशाला, अंतरिक्षयान नोदन प्रणाली एकीकरण एवं परीक्षण सुविधा, यांत्रिकी परीक्षण एवं अनुसंधान प्रयोगशाला, उच्च प्रणोद विद्युत नोदन सुविधा आदि भी संस्थापित एवं सक्रिय किये जाएँगे। वर्ष 2022 के दौरान ही नवीन स्पैक (SPAC) स्वीकृत परियोजनाएँ - जैसे, एकल प्रणोदक परीक्षण सुविधा एवं प्रवाह निर्माण सुविधा भी स्थापित की जाएगी। इस प्रकार, इस केंद्र के अनुभवी कार्यबल के अनवरत प्रयासों से हम नये कीर्तिमान स्थापित करने की दिशा में गतिमान हैं।

इन सभी तकनीकी, वैज्ञानिक एवं अनुसंधान कार्यों के साथ ही हम बड़े ही उत्साह से हिंदी की विविध गतिविधियों को समयबद्ध तरीके से संपन्न कर रहे हैं। विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में जनवरी 2022 के प्रथम सप्ताह में हिंदी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया, जिनमें केंद्र के कर्मचारियों ने बड़े ही उत्साह और उमंग से हिस्सा लिया। 26 जनवरी 2022 को गणतंत्र दिवस के पावन अवसर पर केंद्र की गृह-पत्रिका **नोदन मुकुर** के नौवें अंक का विमोचन किया गया। हम आशान्वित हैं कि कर्मचारी एवं उनके परिजन इस केंद्र की हिंदी गृह-पत्रिका **नोदन मुकुर** के माध्यम से अपने विचारों, दृष्टिकोणों, भावनाओं एवं कलात्मक पहलुओं को यूँ ही अभिव्यक्त करते रहेंगे।

जय हिंद... जय हिंदी।

व. नारायणन

(डॉ. व. नारायणन)
निदेशक, एल पी एस सी एवं अध्यक्ष, रा.भा.का.स. (एल पी एस सी)

उप-संपादक की कलम से...

प्रिय पाठकों आज हमें आपके समक्ष अपनी गृह-पत्रिका नोदन मुकुर के माध्यम से पुन: अपने विचारों को रखने का अवसर प्राप्त हुआ है। आज हम इसके माध्यम से एक अन्य ज्वलन्त पहलू पर बात करने की कोशिश करेगें। हमने पिछले अंक में आज़ादी के अमृत महोत्सव की बात की थी। हम उसी की निरंतरता या कहें मूल भावना के बारे में यानी आत्म-निर्भरता के विषय में कुछ बात करेंगे। यहाँ पर आज आत्म-निर्भरता की महत्ता तथा इसके दूरगामी परिणामों के बारे में बात करना शायद आज के परिप्रेक्ष्य में उचित होगा।

यहाँ, कुछ उदाहरणों के द्वारा आत्म-निर्भरता के महत्व को स्पष्ट करना चाहूँगा। यदि हम आज के वैश्विक परिदृश्य की कल्पना करें तो आत्म-निर्भरता एक कोरी कल्पना मात्र लगती है। यह रोजमर्रा की जरूरतों के लिए सही हो सकती है तथा हम दूसरों पर निर्भर रहकर जी सकते हैं, परंतु यदि अपने अस्तित्व या स्वभिमान की बात आती है तो यह एक दुधारी तलवार हो जाती है। जैसे अधिकतर विकासशील देश तथा पिछड़े देश अपनी सारी जरूरतों, छोटी या बड़ी सभी के लिए विकसित देशों पर निर्भर हैं। ये मुख्यत: उच्च गुणवत्ता की तकनीक, शिक्षा, उन्नत अत्याथुनिक वस्तुएँ हैं। आजकल विकासशील देशों के पास कच्चा-माल तो है, पर तकनीक के अभाव में कम दामों पर उन्हें विकसित देशों को बेच दिया जाता है तथा पुन: इन्हीं परिष्कृत उत्पादों को हम कई गुना ज्यादा पैसा देकर खरीदते हैं। अधिकांश अफ्रीकी देशों के साथ कुछ ऐसा ही हो रहा है।

आज के समय का जीवंत उदाहरण, श्रीलंका की आर्थिक दशा है। श्रीलंका की समस्या के मूल में जायें तो पता चलता है कि श्रीलंका की आय का स्रोत मुख्यत: पर्यटन तथा कृषि उत्पाद, जैसे चाय इत्यादि हैं। कोरोना की महामारी की वजह से जहाँ पर्यटन उद्योग बर्बाद हो गया, वहीं कृषि-क्षेत्र में जैविक खेती की शुरुआत की सरकारी नीति के कारण सीधा असर कृषि-उत्पादों की कमी के रूप में हुआ। इन सबके अलावा श्रीलंका अपनी जरुरतों के लिए चीन-जैसे देशों पर अत्यधिक निर्भर हो गया। चीन द्वारा प्रदत्त उच्च ब्याज दरों के ऋण ने रही-सही कसर पूरी कर दी। श्रीलंका ने शायद कोई दीर्घजीवी आत्म-निर्भर योजना तैयार ही नहीं की, उसी का हश्र वहाँ की जनता आज भुगत रही है। अचानक आय के स्रोतों में कमी तथा दूसरे देशों पर अत्यधिक निर्भरता ने श्रीलंका की अर्थव्यवस्था को पंगु बना दिया है।

ऐसा ही कुछ वर्ष 2019 के समय संसाधन-संपन्न दक्षिण अमेरिकी देश वेनेज़ुएला में अमेरिका तथा उसके सहयोगी देशों द्वारा लगाए गये आर्थिक प्रतिबंधों के कारण हुआ था। वेनेज़ुएला की बात की जाए, तो वहाँ पर तेल का अपार भंडार है तथा प्राकृतिक रूप से वहाँ की धरती अति उपजाऊ भी है। लेकिन वहाँ तेल की प्रचुरता है, जिसके निर्यात से आने वाले आय के कारण देश रोजमर्रा की सारी जरूरतों के लिए पूरी तरह बाहरी आयातों पर निर्भर हो गया। इस तरह जनता सरकार द्वारा प्रदत्त मुफ्त सेवाओं से अपना स्वावलंबन खो बैठी। अचानक वैश्विक राजनीति में बदलाव के कारण पेट्रोलियम उत्पादों पर लगे रोक ने वहाँ की अर्थव्यवस्था को धराशायी कर दिया। जहाँ तक अनुमान है उस समय वेनेज़ुएला से लगभग 30 लाख से अधिक नागरिक आर्थिक तंगी के कारण पलायन कर गये। अत: प्राकृतिक संपदा से संपन्न देश आत्मनिर्भर न होने के कारण अचानक बर्बादी की कगार पर खड़ा हो गया।

यदि आज बात यूक्रेन-रूस युद्ध की करें तो इसका असर भी विश्व की सारी अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ा है। भारत में भी इसका असर पेट्रोलियम उत्पादों की दरों में प्रतिदिन बढ़ोतरी के रूप में देखा सकता है। हमारी तेल की 80% से ज्यादा तथा गैसीय ईंधन की 45% से अधिक की जरूरतें आयात से पूरी होती हैं। अत: हमें भविष्य में वैकल्पिक ऊर्जा के नए स्रोतों - जैसे, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, नाभिकीय ऊर्जा आदि पर निर्भरता बढ़ानी होगी जिससे आयात पर निर्भरता कम की जा सके। जहाँ तक रही बात उच्च स्तर की तकनीक की, तो इसका ज्यादातर हिस्सा आज भी हम आयात करते हैं और इस पर बहुत सारी विदेशी मुद्रा खर्च करते हैं। यदि अचानक किसी कारणवश इनकी आपूर्ति बंद हो जाये तो हमारे कई विकासोन्मुख कार्य ठप्प पड़ जायेंगे।

इसीलिए आज बदलते वैश्विक परिदृश्य में हर क्षेत्र में आत्म-निर्भर होना बहुत जरुरी है। शायद यह प्रश्न किया जा सकता है कि यदि तकनीकी सामान आयातित हो सकता है तो हमें इसे विकसित करने की क्या आवश्यकता है। ऐसे में शायद कभी हमारी स्थिति कमोबेश वैसी ही हो सकती है, जैसा कि कुछ उद्धरित देशों की हुई। यदि हम समर्थ नहीं होंगे, तो निर्यातक देश अपनी शर्तों पर हमें माल प्रदान करेंगे एवं मंहगी दरों पर देंगे।

कुछ लोग भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रमों, जैसे - गगनयान, चंद्रयान आदि के बारे में ऐसी ही धारणा रखते हैं। लेकिन यदि वर्तमान में हम इन कार्यक्रमों में पीछे रह गए तो इनमें प्रयुक्त तकनीक के विकास से भी हम अछूते रह जाएंगे। इसी का परिणाम है कि हम बहुत सारी तकनीकियों में महारथ हासिल करते जा रहे हैं। मुड़कर देखें तो दुनिया के बहुत सारे सक्षम देश हमारे साथ उच्च गुणवत्ता की तकनीकें साझा नहीं करना चाहते थे, परंतु आज हमारे मेहनत तथा आत्म-निर्भरता की ही देन है कि अमेरिकन, यूरोपीयन आदि अंतरिक्ष संगठनों ने कई महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों तथा तकनीकी विकास में भारतीय हिस्सेदारी को स्वीकार किया है। इसी तरह अभी भी यदि हम निगाहें दौड़ाएँ तो हम कई सारे मामलों में जैसे - रक्षा उपकरणों, अंतरिक्ष तकनीकी, मशीनरी, चिकित्सीय उपकरणों इत्यादि के लिए अभी भी विदेशों पर निर्भर हैं। समय रहते हमें ऐसे कई क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनने की जरुरत है। यदि हम आत्मनिर्भर होंगे, समर्थ होंगे तभी दूसरे देश हमारी महत्ता को समझेंगे। आशा है हमारे विचारों से आप सभी प्रेरित होंगे तथा इस दिशा में अपने स्तर पर कुछ जरुर कोशिश करेंगे।

धन्यावाद ! नमस्कार !

सूर्य मणि त्रिपाठी

मनोज कुमार
सहायक निदेशक (रा.भा.)

डॉ. एस सोमनाथ का व्यक्तित्वः एक परिचय

अंतरिक्ष विभाग/इसरो के दीप्तमान नक्षत्रों में शामिल, व्यक्तित्व एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी, डॉ. एस सोमनाथ को भला कौन नहीं जानता है? वे वर्तमान में अध्यक्ष इसरो एवं सचिव अंतरिक्ष विभाग के गौरवमय पद को सुशोभित कर रहे हैं। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इनके अहम योगदानों से हम सभी भली-भाँति परिचित हैं। केरल के अलापुझा जिले के अरूर गाँव में सभ्य एवं शिक्षित परिवार में जन्मे और पले-बढ़े, डॉ. एस सोमनाथ के मन में शून्य आकाश में टिमटिमाते तारों, ग्रहों एवं नक्षत्रों से संवाद करने की उत्कंठा यूँ तो बचपन से ही थी, लेकिन केरल विश्वविद्यालय में यांत्रिकी अभियांत्रिकी का अध्ययन करते हुए उनकी यह उत्कंठा और प्रबल हो गई। उनका बचपन किसी भी कार्य को बड़ी ही लगन एवं प्रेरणा से करते हुए बीता। वे अपने पिता, जो एक हिंदी शिक्षक एवं शिक्षाविद् थे, के सहयोग एवं मार्गदर्शन से अंतरिक्ष विज्ञान के अध्ययन के सपने को पूरा करने के लिए निकल पड़े। उनके पिता ने उन्हें बचपन से ही यह शिक्षा दी थी कि वे जो भी कार्य करें उसे गहरी समझ एवं समर्पण के साथ करें। इस शिक्षा का उनके जीवन पर यह प्रभाव पड़ा कि वे

जीवन के प्रारंभिक लम्हों से ही सफलता के सोपान पर आगे बढ़ते चले गये। कॉलेज के दिनों में डॉ. सोमनाथ ने अपने प्रोफेसर से अनुरोध किया था कि उन्हें रॉकेट विज्ञान के एक विशिष्ट विषय नोदन पाठ्यक्रम अध्ययन करने का अवसर दिया जाये, लेकिन उन दिनों यह पाठ्यक्रम अभियांत्रिकी में शामिल नहीं था। यांत्रिकी अभियांत्रिकी की पढ़ाई पूरी करने के बाद इन्होंने वांतरिक्ष अभियांत्रिकी में स्नातकोत्तर की पढ़ाई के लिए बेंगलूरु स्थित भारतीय विज्ञान संस्थान में प्रवेश लिया। वहाँ इन्होंने अपनी विलक्षण विद्वता का परिचय दिया तथा इन्हें वांतरिक्ष अभियांत्रिकी के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। स्नातकोत्तर के उपरांत वे इसरो के विलक्षण वैज्ञानिकों के समूह में शामिल हो गए।

प्रसिद्ध वांतरिक्ष अभियंता एवं रॉकेट वैज्ञानिक डॉ. एस सोमनाथ 14 जनवरी 2022 से में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष एवं अंतरिक्ष विभाग के सचिव के पद को सुशोभित कर रहे हैं और आने वाले 03 वर्षों तक संयुक्त रूप से इन गौरवमय पदों पर आसीन रहेंगे। इन पदों पर आसीन होने से पूर्व विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र के निदेशक पद पर रहते हुए इन्होंने तकनीकी संवर्धन के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की। ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचन यान के सफल उड़ान में इनका अतुलनीय योगदान रहा। 1994 में एक युवा अभियंता के रूप में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन में सजीव ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचनयान रॉकेट में प्रमोचन के समय अचानक उत्पन्न हुई समस्या का समाधान इन्होंने अपने दो वरिष्ठ वैज्ञानिकों के साथ मिलकर किया। इस प्रमोचनयान के प्रमोचन के काउंट-डाउन के अंतिम क्षणों में रॉकेट में उत्पन्न तकनीकी खामी के कारण यह चिरप्रतिक्षीत प्रमोचन टाल दिया गया। चूंकि यह रॉकेट 200 टन के खतरनाक ईंधन एवं

रासायनिक मिश्रणों से लदा हुआ था, इस खामी को दूर करना अत्यंत जोखिम भरा कार्य था। उस तकनीकी खामी को दूर करने के उपरांत कुछ ही मिनटों में रॉकेट का प्रमोचन अत्यंत बेहतर ढंग से संपन्न हो सका।

डॉ. सोमनाथ कई अंतरिक्ष विज्ञान के कई विधाओं के मर्मज्ञ हैं, जिसमें प्रमोचनयान की अभिकल्पना में विशेषज्ञता भी शामिल है। वे प्रमोचनयान प्रणाली अभियांत्रिकी संरचनात्मक अभिकल्पना, संरचनात्मक गतिकी समेकन अभिकल्पना एवं प्रक्रिया यांत्रिकी अभिकल्पना तथा पाइरोटेक्निक्स में पारंगत हैं।

निदेशक एल पी एस सी के रूप में इन्होंने सी ई 20 क्रायोजेनिक इंजन एवं सी 25 चरण के विकास तथा योग्यता परीक्षण-संबंधी कार्यों को पूरा करने वाले समूह का नेतृत्व किया, जिसके फलस्वरूप जी एस एल वी मार्क-III डी 1 ने सफलतापूर्वक उड़ान भरी। चंद्रयान-2 के लैंडर क्राफ्ट के लिए प्रणोद-उत्प्रेरक इंजन का विकास एक अन्य ऐतिहासिक विकास-कार्य था। इन्हीं के नेतृत्व में पहली बार जीसैट-9 में 18 मी.एन. प्रवाह विद्युत नोदन प्रणाली की उड़ान सफल रही तथा 75 मी.एन. एवं 300 एम एन प्रवाह स्थिर प्लाज्मा प्रणोदकों का विकास कार्य संपन्न हुआ।

1985 में डॉ. सोमनाथ ने इसरो के विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र में ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचनयान के प्रारंभिक चरणों में समेकन के लिए वैज्ञानिकों के दल का नेतृत्व किया। इन्होंने स्वदेशी क्रायो चरण के साथ भू-तुल्यकालिक उपग्रह यान के सफल अभियानों में अहम भूमिका निभाई जो आने वाले अंतरिक्ष युग में मील के पत्थर साबित हुए। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में योगदानों के लिए इन्हें अंतरिक्ष स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया है। साथ ही इन्हें 2014 में जी एस एल वी मार्क-III के विनिर्माण के लिए टीम उत्कृष्टता पुरस्कार तथा कार्य निष्पादन उत्कृष्टता पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है। इन्होंने अपने वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं को संबोधित करते हुए कहा था *''हम रॉकेट संवर्धन-कार्य केवल इसलिए नहीं करते हैं कि वे उपग्रहों को अंतरिक्ष में स्थापित करने का कार्य करते हैं, बल्कि रॉकेट पर हम कार्य इसलिए करते हैं कि रॉकेट ही वे माध्यम हैं जिनसे मनुष्य पृथ्वी तटों से ग्रहों पर पहुँच सकता है''*। एक ओजस्वी वैज्ञानिक एवं अभियंता के साथ ही ये एक सिनेमा प्रेमी भी हैं और तिरुवनंतपुरम में रहते हुए ये फिल्म सोसाइटी के सदस्य भी रहे। डॉ. सोमनाथ एक अत्यंत प्रभावशाली सार्वजनिक वक्ता हैं और कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों से इन्होंने तकनीकी विषयों पर अपने भाषणों के जरिये श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया है। सफलताओं ने न तो उनके अंदर कभी अहंभाव उत्पन्न किया न ही असफलताओं ने उन्हें विचलित। अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में नए-नए कीर्तिमान स्थापित करते हुए वे कर्त्तव्य पथ पर निरंतर आगे बढ़ते रहे। इसरो के अध्यक्ष के रूप में डॉ. सोमनाथ के लिए सबसे बड़ी चुनौती है-अत्यंत महत्त्वाकांक्षी परियोजना गगनयान मिशन को सही दिशा और गति प्रदान करना तथा विश्व समुदाय को भारतीय अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का लोहा मनवाना। सादगी एवं सरलता से ओत-प्रोत इनका व्यक्तित्व युवा पीढ़ी के लिए अत्यंत प्रेरणाप्रद है। वे अपने संभाषणों के जरिये नवोद्भिद वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं को सदैव प्रेरित करते रहते हैं। इसरो के अध्यक्ष के पदभार ग्रहण के उपरांत उन्होंने एक साक्षात्कार में कहा, *''मेरे और मुझसे जुड़े उन सभी के लिए यह अत्यंत ही गर्व का क्षण है। इस उत्तरदायित्व से मैं अत्यंत अभिभूत हूँ तथा आगे चुनौतीपूर्ण समय का सामना करने के लिए तैयार हूँ। मैं अंतरिक्ष कार्यक्रम का लाभ जन-जन तक पहुँचाना चाहूँगा और राष्ट्रीय आवश्यकताओं को भी पूरा करूँगा। इसके अलावा, हमें इसका आगे विस्तार करना होगा तथा अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में नई बुलंदियों को हासिल करना होगा।''* किसी विद्वान् ने सच ही कहा है-

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुंडलेन, दानेन पाणिर्न तु कंकणेन।
विभाति कायः करुणापराणां, परोपकारैर्न तु चन्दनेन।।

आज सारी दुनिया की निगाहें इसरो के वर्तमान अध्यक्ष पर टीकी हैं। यह आशा है कि इनके अनुभव एवं कर्मठता से अंतरिक्ष कार्यक्रमों को नई दिशा मिलेगी तथा भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन, अंतरिक्ष अनुसंधान, अंतर्ग्रहीय अभियानों, एवं तकनीकी संवर्धन के क्षेत्रों में आने वाले दिनों में नई बुलंदियाँ हासिल करेगा।

(समाचार माध्यमों में प्रकट विभिन्न लेखों/रिपोर्टों केआधार पर अनुसृजित)

मातृत्व

के एन सरस्वती
नियंत्रक, द्र.नो.प्र.कें.

माताएँ एक ही समय पर गार्हस्थ्य जीवन में कई भूमिकाएँ निभाती हैं-वे बच्चों का लालन पालन करती हैं, कार्य-स्थल पर अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करती हैं और अपने व्यक्तिगत जीवन एवं कार्यालयीन उत्तरदायित्त्वों के बीच संतुलन स्थापित करती है। सामान्यत: लोग मातृत्व का तात्पर्य जन्म देने की जैविक प्रक्रिया को मानते हैं। कई स्त्रियों ने अपने बच्चों को जन्म दिया और उनकी देख-रेख की जिम्मेदारियों को बड़ी ही निष्ठा और गंभीरता से निभाया। यह भी देखा गया है कि कुछ स्त्रियों ने शिशुओं को जन्म तो दिया, लेकिन उन्हें किन्हीं कारणों से परित्यक्त कर दिया। यह आवश्यक नहीं है कि अपने शरीर से शिशु को जन्म देने वाली स्त्री ही माँ कहलाने की अधिकारिणी हो। हालाँकि जन सामान्य की दृष्टि में शारीरिक रूप से बच्चे को जन्म देने वाली स्त्री ही माँ कहलाती है, लेकिन वास्तविकता यह है कि मातृत्व की अनुभूति शारीरिक घटना से कहीं परे है। ऐसी माताएँ हुई हैं जिन्होंने बच्चे को जन्म तो नहीं दिया, फिर भी उन्होंने माँ की जिम्मेदारियों को बड़े ही खूबसूरत ढंग से निभायी और ऐसी भी माँयें हुई हैं जिन्होंने अपने बच्चों का परित्याग कर दिया जो मातृत्व के सारतत्त्व का अपमान है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि शारीरिक रूप से बच्चे को जन्म देना ही मातृत्व नहीं है।

मातृत्व की परिभाषा भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा भिन्न-भिन्न तरीके से दी गई है। कुछ लोगों के लिए यह बच्चों के लालन-पालन की कला है तो कुछ के लिए अपनी पेशेवर ज़िन्दगी के साथ गार्हस्थ्य जीवन के प्रबंधन का तरीका। कुछ के लिए मातृत्व व्यक्तित्व को परिभाषित करने का जरिया हो सकता है। यह समय की माँग है कि मातृत्व को किसी एक दृष्टिकोण से परिभाषित या वर्गीकृत करने की संकल्पना से ऊपर उठा जाए और हर व्यक्ति को अपने तरीके से मातृत्व को परिभाषित करने की स्वतंत्रता दी जाए। मातृत्व की कला भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से प्रभावित करती है जिसका सम्मान किया जाना चाहिए।

मातृत्व को मानव-अस्तित्व का सबसे विशुद्ध रूप माना गया है और मातृत्व-सार भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा भिन्न-भिन्न रूपों में वर्णित है। मातृत्व भिन्न-भिन्न स्त्रियों को भिन्न-भिन्न तरीकों से प्रभावित करता है और इसका समान रूप से सम्मान किया जाना चाहिए। बदले में बिना कुछ अपेक्षा रखे किसी से हृदय की गहराइयों से प्रेम करने एवं लालन-पालन करने की कला को ही मातृत्व कहा गया है। कोई स्त्री किसी को मात्र खाना परोस देने से ही माँ नहीं बन जाती। मातृत्व प्रदर्शित करने के लिए खाना बनाना एवं परोसना ही महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं हैं। मातृत्व में वह प्रेम झलकता है जिससे माँ खाना परोसती है। एक माँ आपकी सभी बुरी आदतों से अवगत होती है, तब भी वह आपसे प्यार करती है। वह बच्चों को केवल जीवन की कला ही नहीं, बल्कि निर्भीक एवं सत्यनिष्ठ जीवन जीने की कला सिखाती है। वह अपने बच्चों के सपनों एवं अभिलाषाओं का ख्याल रखती है। वह आपको भय एवं आघात से साहसपूर्वक लड़ने में आपकी सहायता करती है।

यदि किसी बच्चे के जीवन में आत्मविश्वास एवं सुरक्षा की भावनाओं का संचार करना हो तो वहाँ माँ एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सभी बच्चे अपनी माँ को आदर्श मानते हैं और अक्सर उन्हीं के गुणों का अनुकरण करते हैं। समाज में कई ऐसी संतानें हैं जिनकी माँओं ने उनकी उम्मीदों के मुताबिक उनके लिए कुछ भी नहीं किया। मातृत्व का कर्त्तव्य निभाना इतना आसान नहीं है, जितना शारीरिक रूप से संतान को जन्म देना। अपनी आखिरी साँस तक एक माँ अपने बच्चे की देख-रेख करती है, साथ ही जीवन के किसी भी पड़ाव में बच्चे की समस्याओं को सुलझाने से नहीं कतराती।

मातृत्व एवं बच्चों के लालन-पालन के कई पड़ाव होते हैं। बालपन में माताएँ धात्री की भूमिका निभाती हैं और नि:स्वार्थ प्यार एवं स्नेह से बच्चों का लालन-पालन करती हैं। किसी बच्चे के लिए माँ उसके जीवन में एक विशिष्ट शख्सियत होती है, साथ ही वह हमेशा सबसे अच्छी दोस्त बनी रहती है। माताएँ बच्चे के जीवन में पहली शिक्षिका एवं मार्गदर्शिका होती हैं और बच्चों का उनसे अगाध प्रेम होता है। मातृत्व स्त्री को एक अत्यंत नवीन अनुभूति प्रदान करता है। यह स्त्री के जीवन में आमूल-चूल

परिवर्तन लाता है और यह परिवर्तन बच्चों की खुशी एवं संघर्षों की सर्वोच्च प्राथमिकताओं को दर्शाता है। माताएँ सबसे अधिक निःस्वार्थ प्राणी होती हैं और उनके लिए प्रत्येक दिन एक नया अनुभव लाता है।

बच्चों को यथारूप स्वीकार करना एवं उन्हें बिना शर्त सहयोग प्रदान करना मातृत्व के वास्तविक गुण हैं। जीवन-संघर्ष में माँ का मार्गदर्शन बच्चे को दृढ़ संकल्पित एवं साहसी बनाता है। विश्व के संदर्भ में बच्चे की दूरदर्शिता अधिकांशतः उसकी माँ की दूरदर्शिता का ही प्रतिबिम्ब होती है। नारीवादी दृष्टिकोण से मातृत्व के संबंध में कई प्रचलित विवाद हुए हैं। मातृत्व की संकल्पना में सामाजिक प्रथाएँ शामिल हैं जो महिलाओं को प्रतिबंधित करती हैं और इसे बाद में स्वार्थहीनता का कार्य कहा जाता है। अच्छी **माँ** होने का अर्थ अपनी आत्मा में मातृत्व के गुणों को स्थापित करना है। अच्छी माँ बनने का सबसे अच्छा तरीका है अपनी आत्मा को पवित्र विचारों से भर लेना। किसी माँ के पास स्वाभाविक रूप से पर्याप्त प्यार, शक्ति, धैर्य और चतुराई होनी चाहिए। हर स्त्री में ईश्वर की कृपा से जीवनदायिनी शक्ति होती है। मातृत्व में जीवन की आशाएँ, सपने, स्वीकार्यता, असफलताएँ, निराशायें, पश्चाताप और क्षमा जैसे तत्त्व शामिल होते हैं। आने वाली जीवन-परीक्षाओं के लिए अपने बच्चे का लालन-पालन करने और आनेवाली पीढ़ी के जीवन को विविध रंगों से रंजित करने के लिए मातृत्व वर्षों से रहस्य बना हुआ है, वास्तव में एक पवित्र रहस्य। यह जैविक संबंधो से बहुत ऊपर है। वास्तव में मातृत्व बच्चों को ईश्वर का वरदान है।

कुमारी शालू
हिंदी टंकक,
द्र.नो.प्र.के. बेंगलूरु

चाहत

किसी को पैसे की चाहत, किसी को पावर की
किसी को शोहरत की तो किसी को इज्जत की

कोई नौकरी चाहता है, कोई बिजनेस
कोई पढ़ना चाहता है, तो कोई खेलना

किसी को आईफोन चाहिए, किसी को ऊँची बिल्डिंग का घर
किसी को बड़ी गाड़ी की दरकार है, तो किसी को लॉटरी लगने का इंतज़ार

किसी को परिवार चाहिए तो किसी को दोस्त
किसी को प्यार चाहिए तो किसी को सपोर्ट

कोई दो जून की रोटी चाहता है तो कोई सर पर छत
कोई माँ-बाप का प्यार चाहता है तो कोई बच्चों का साथ

न चाहतों की कोई सीमा, न इच्छाओं का कोई अंत
इन्हें पूरा करते-करते ज़िंदगी पड़ जाए कम

युद्ध से शांति की ओर...

मनोज कुमार
सहायक निदेशक (रा.भा.)
द्र.नो. प्र. कें.

युद्ध की विभिषिका में विश्व है अब जल रहा।
विकास के इस गर्भ में विनाश है अब पल रहा।
सृजन का पर्याय विज्ञान प्रलय पथ पर है चल रहा।
क्या भविष्य वैसा ही होगा, जैसा अपना कल रहा?
प्रेम, दया, करुणा, वात्सल्य सब रह गईं हैं बातें किताबी।
ईर्ष्या, लोभ, मोह, वैमनस्य हो रहे मनुज पर हावी।
होड़ लगी है हथियारों की मानव ही मानवता को छल रहा।
चारों ओर अंधेरा पसर रहा सत्य का सूरज ढल रहा।
असहाय पड़ गया है मानव अब न कोई संबल रहा।
धड़क उठे जो औरों के दुख से वैसा न अब दिल रहा।

आशाएं फिर भी आ रही हैं अपने पंख पसारे।
क्या मनुज खड़ा है इनके अभिनंदन को अपने द्वारे?
पंखों की वात्सल्य-छाया में दुख-संताप हो ओझल रहा।
पूरब से शांति-समीर बह दिग-दिगंत में फैल रहा।
वसुधैव कुटुम्बकम् का संदेश निकल रहा बुद्ध की धरा से।
पृथ्वी शांतिः की शाश्वत-कामना आ रही वेदों की परंपरा से।
चिर संघर्ष से विश्रांत विश्व पा रहा इनसे नवजीवन।
आशा-रश्मियां छिटक-छिटक कर कर रहीं आलोकित धरा का कण-कण।
शांति-सरिता एक दिन बहेगी अविरल, यह विश्वास हो अटल रहा ।
कलुष भेद का तिमिर मिट जाएगा, आशा दीप जल हर पल रहा।

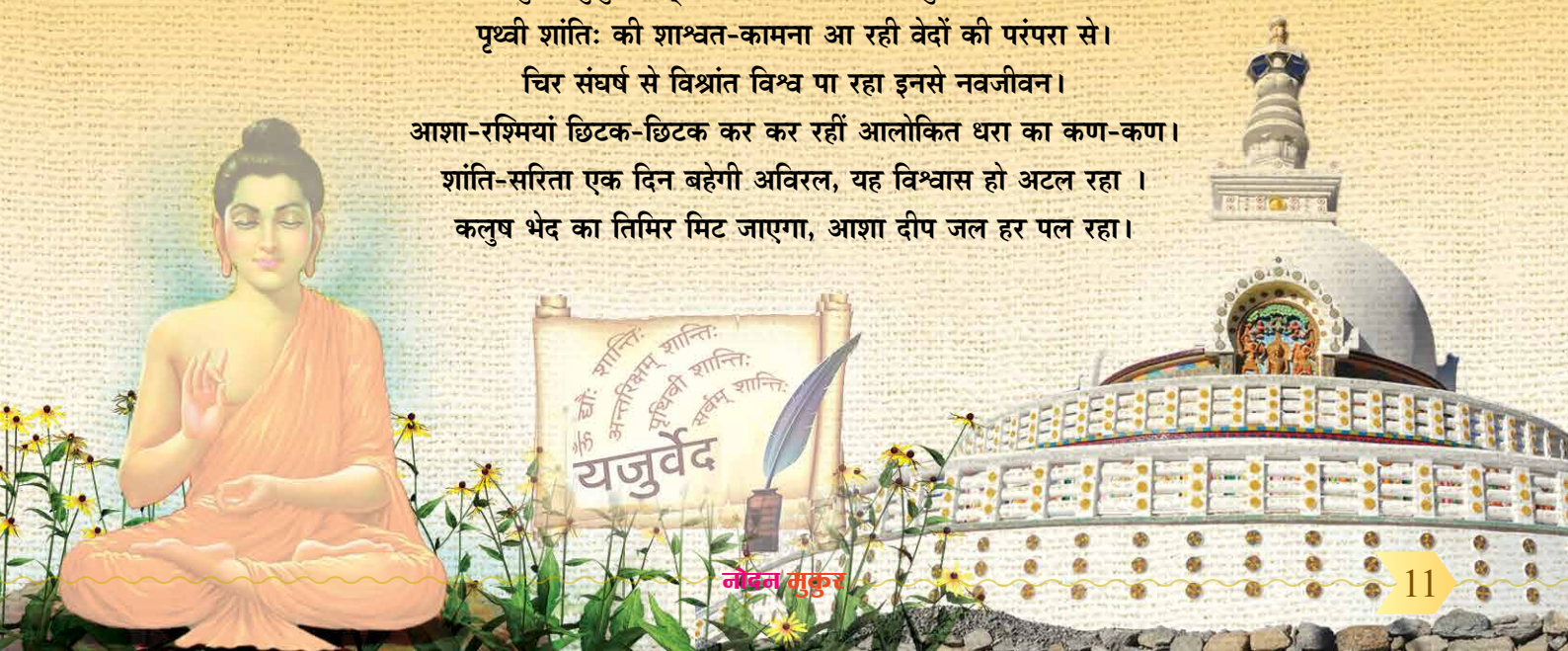

अभिनव उपाध्याय
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें.,
वलियमला

स्वर कोकिला: लता मंगेशकर

संपूर्ण विश्व को ईश्वर द्वारा दिया गया परम अनूठा उपहार- लता मंगेशकर जी, संस्कृति के किसी पटल पर परिचय की मोहताज नहीं हैं। मानव-अनुभूतियों को नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने वाली उनकी आवाज़ साक्षात् माँ सरस्वती के कंठ से प्रवाहित होती मालूम पड़ती है। अपने जीवन के रहस्यों को भेदने व उनके साथ अवलोकन करने में उनके सुरमय गीतों का सहारा लेने वाले करोड़ों व्यक्ति एवं आने वाली पीढ़ियाँ, लता जी के उपकारों के लिए उनकी परम स्मृति की सदा आभारी रहेंगी।

लता जी का जन्म 28 सिंतबर, 1929 को इंदौर, ब्रिटिश भारत में एक गोमंतक मराठा परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री पंडित दीनानाथ मंगेशकर एक मराठी संगीतकार, शास्त्रीय गायक एवं नाटकीय अभिनेता थे, जबकि इनकी माता शेवंती गुजराती थीं। जन्म के समय लता जी का नाम 'हेमा' रखा गया था, जिसे इनके पिता ने बदलकर **लता** रख दिया। यह नाम उन्हें अपने ही एक नाटक 'भाव बंधन' की एक महिला किरदार 'लतिका' के नाम से सूझा। अपने बहन-भाइयों में लता जी सबसे बड़ी हैं। इनकी छोटी बहनें - उषा मंगेशकर, मीना मंगेशकर, आशा भोंसले एवं छोटे भाई हृदयनाथ मंगेशकर सभी ने संगीत को ही अपना पेशा बनाया।

लता जी एवं आशा जी तो फिल्म जगत में पार्श्वगायन के लिए सबसे मशहूर हस्तियाँ हैं।

लता जी की परवरिश महाराष्ट्र में हुई। बचपन से ही उनका रुझान संगीत की ओर था और वे गायिका बनना चाहती थीं। इनके पिताजी की असामयिक मृत्यु ने इनके परिवार को आर्थिक संकट में डाल दिया। अपने छोटे भाई-बहनों की परवरिश हेतु उन्होंने तेरह वर्ष की कच्ची उम्र से धन अर्जित करना शुरू कर दिया। अपनी स्कूली शिक्षा बीच में ही छोड़ दी एवं अभिनय न पसंद होने के बावजूद कुछ हिंदी और मराठी फिल्मों में अभिनय भी किया। बचपन के संघर्ष से पैदा होने वाली दमक उनकी आवाज़ एवं शख्सियत को सदा उल्लसित करती रही।

पाँच वर्ष की उम्र से ही लता जी ने अपने पिताजी पंडित दीनानाथ से संगीत सीखना शुरू कर दिया था। प्रारंभ से ही उन्हें घर में ही संगीत एवं कला का माहौल मिला। सन् 1945 में वे मुम्बई आकर बस गईं और भिंडीबाजार घराने के

उस्ताद अमन अली खान से भारतीय शास्त्रीय संगीत की तालीम हासिल की। सन् 1948 से संगीत निर्देशक गुलाम हैदर इनके शिक्षक बन गए। अपने चौरासीवें जन्मदिन पर एक साक्षात्कार के दौरान लता जी ने गुलाम हैदर को अपना धर्मपिता कहा। इनके अतिरिक्त अमानत खान देवस्वले और पंडित तुलसीदास शर्मा भी इनके संगीत गुरु रहे। इनको गाते हुए सुनकर दिग्गज गायक उस्ताद बड़े गुलाम अली खान ने कहा था, 'कम्बख़्त कभी बेसुरी नहीं होती।'

यूँ तो लता जी ने सन् 46 से ही हिंदी फिल्मों में गीत रिकॉर्ड करना प्रारंभ कर दिया था परंतु उनकी ख्याति को उड़ान मिली सन् 49 की फिल्म 'महल' के 'आएगा आनेवाला' गीत से। इसी वर्ष गाया हुआ फिल्म 'बरसात' का गीत, 'हवा में उड़ता जाए मेरा लाल दुपट्टा मलमल का' जनमानस की ज़ुबान पे चढ़ गया और उसने लता जी को संगीत जगत में स्थापित कर दिया। पचास के दशक में वे कई दिग्गज अभिनेत्रियों की पर्दे के पीछे वाली आवाज़ बनीं, जिनमें – नरगिस, नूतन और वैजंतीमाला प्रमुख हैं। इस काल-खंड के प्रमुख गीत, 'वो चाँद खिला' और 'दिल की नज़र से' (अनाड़ी), 'प्यार हुआ इकरार हुआ' और 'रमैया वस्तावैया' (श्री 420), 'आजा सनम मधुर चाँदनी में हम' और 'जहाँ मैं जाती हूँ वहीं चले आते हो' (चोरी चोरी), 'घर आया मेरा परदेसी' (आवारा), 'ज़ुल्मी संग आँख लड़ी' (मधुमती) आदि हैं।

आने वाले चार दशकों ने लता जी को सम्मान एवं लोकप्रियता के उस शिखर पर पहुँचता देखा जिसके बारे में पहले सोचना भी असंभव हुआ करता था। उन्होंने बॉलीवुड के महानतम संगीतकारों के लिए गीत गाए और कई बड़े पुरुष गायकों के साथ युगल गीत भी गाए। पचास के दशक से नब्बे के दशक तक का समय पार्श्वगायन में उनकी निर्विवाद सत्ता का वक्त था। अपने कर्म के प्रति उनकी निष्ठा का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि अपने मराठी लहज़े से ऊपर उठकर हिंदी-उर्दू में गाने के लिए उन्होंने शफी नाम के मौलाना से उर्दू भी सीखी। 1963 में उन्होंने लक्ष्मीकांत - प्यारेलाल की संगीतकार जोड़ी के साथ काम करना शुरू किया और आने वाले पैंतीस वर्षों में सात सौ गीत उनके दिए हुए संगीत पर गाए। उनके गाए भजन, 'अल्लाह तेरो नाम' और 'प्रभु तेरो नाम' आज भी हिंदुस्तानियों के ज़ेहन में बसते हैं। उनके सदाबहार गीतों में से चंद, 'आज फिर जीने की तमन्ना है', 'चंदा-सा होगा', 'गाता रहे मेरा दिल', 'पिया तोसे नैना लागे रे', 'होंठों पे ऐसी बात', 'रंगीला रे', 'खिलते हैं गुल यहाँ', 'पिया बिना' (अभिमान) आदि हैं।

सन् 1960 में आई फिल्म मुगल-ए-आज़म में मधुबाला पर फिल्माया गया उनका गीत 'जब प्यार किया तो डरना क्या' देश की रूह में बस गया। सन् साठ की ही गीत 'अजीब दास्तां है ये' आधी सदी के बाद भी अति प्रासंगिक रहा। महान् संगीतकार मदन मोहन के लिए उनके गाए गीत जैसे 'आप की नज़रों ने समझा', 'लग जा गले' और 'तू जहाँ जहाँ चलेगा' बहुत मकबूल हुए। आरज़ू फिल्म का उनका गीत 'अजी रूठ कर अब कहाँ जाइयेगा' सौम्यता की हदों को पार करके मन को भावों के ऐसे आँगन में ला खड़ा कर देता है जहाँ सच्चाई और निश्छल प्रेम के सिवा कुछ भी नहीं। फिल्म 'पाकीज़ा', 'सिलसिला', 'आँधी' और 'प्रेमरोग' में गाए हुए उनके सभी गीत अनूठे हैं।

उनके कुछ और लोकप्रिय गीत हैं, 'रूठे रूठे पिया' (कोरा कागज़) , 'तू कितने बरस की' (कर्ज़), 'शीशा हो या दिल हो' (आशा), 'मेरे नसीब में' (नसीब), 'ज़िंदगी की न टूटे लड़ी' (क्रांति), 'जब हम जवाँ होंगे' (बेताब), 'ज़िंदगी हर कदम' (मेरी जंग), 'हमें और जीने की' (अगर तुम न होते), 'सागर किनारे' (सागर), 'पास हो तुम मगर करीब नहीं' (लूटमार), 'दुश्मन न करे' (आखिर क्यों), 'वादा न तोड़' (दिल तुझको दिया), 'सुन साहिबा सुन' (राम तेरी गंगा मैली), 'ज़िंदगी प्यार का गीत है' (सौतन), 'दिल दीवाना' (मैंने प्यार किया), 'लुका छुपी' (रंग दे बसंती) आदि। संगीतकार राहुल देव बर्मन का आखिरी गीत 'कुछ ना कहो' भी लता जी ने गाया। तुलनात्मक तौर पर नए दौर की फिल्मों में शानदार गीत गाए जिनमें 'दिलवाले दुल्हनिया ले जाएँगें', 'हम आपके हैं कोन' और 'वीर ज़ारा' प्रमुख फिल्में हैं।

सत्तर के दशक में उन्होंने कई संगीत एल्बम भी निकाले जो कि मीराबाई के भजन, ग़ालिब की गज़लों, मराठी लोकगीत, गणेश आरती एवं संत तुकाराम के अभंग आदि पर आधारित थे। 1994 में उन्होंने जमाने के सभी बड़े गायकों को नमन करते हुए 'श्रद्धांजलि' एल्बम निकाला। 2007 में जावेद अख्तर द्वारा रचे हुए गीतों का एल्बम सादगी निकला। 2011 में सरहदें एल्बम का 'तेरा मिलना बहुत अच्छा लगे' मेंहदी हसन के साथ गाया हुआ युगल गीत भी खूब मशहूर हुआ। 2014 में ए आर रहमान के एल्बम 'रौनक' में उनका गाया 'लाडली' गीत भी अनुपम है। 2019 में उन्होंने 'सौगंध मुझे इस मिट्टी की' गीत देश एवं सेना को समर्पित किया।

सन् 63 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू की आँखों में आँसू आ गए जब उन्होंने लता जी को 'ऐ मेरे वतन के लोगों' गाते सुना। उनको तीन राष्ट्रीय पुरस्कार, चार सर्वश्रेष्ठ पार्श्वगायिका फिल्मफेयर पुरस्कार, दो विशेष फिल्मफेयर पुरस्कार, एक जीवनकाल उपलब्धि फिल्मफेयर पुरस्कार आदि

प्राप्त हुए। सन् 2001 में उन्हें भारतीय नागरिक के सर्वोच्च सम्मान भारत रत्न से नवाज़ा गया। 1984 में मध्य प्रदेश सरकार ने एक 'लता मंगेशकर पुरस्कार' शुरू किया। आठ दशकों के अपने संगीत के सफर में उनके तीस हज़ार से भी ज्यादा गीतों के रिकॉर्ड करने का अनुमान है। उन्होंने छत्तीस भारतीय भाषाओं में एवं अंग्रेज़ी, रूसी, डच और सिंहला समेत कुछ विदेशी भाषाओं में भी गीत गाए हैं।

पूर्व प्रधानमंत्री भारत रत्न श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी से उनका गहरा नाता रहा। वे उन्हें पिता तुल्य मानकर दद्दा पुकारती थीं और अटल जी भी उन्हें बेटी मानते थे। 2014 में अटल जी की कविताओं को उन्होंने 'अंतरनाद' नामक एल्बम में गाया। अटल जी के निधन पर व्यथित मन से उन्होंने कहा कि आज वे दूसरी बार अपने पिता को खो चुकी हैं। क्रिकेट के भगवान भारत रत्न सचिन तेंदुलकर को वे अपना बेटा मानती थीं और सचिन भी उन्हें 'आई' (मराठी में माँ) कहकर संबोधित करते थे। क्रिकेट से लता जी का लगाव जगजाहिर था और सचिन के लिए उनका प्यार भी।

अपने एक साक्षात्कार में लता जी ने स्वयं कहा कि उनकी गायिकी में पच्चहत्तर प्रतिशत कुदरती प्रतिभा है और पच्चीस प्रतिशत उनका निजी अभ्यास। वे महिला गायिकाओं के लिए संगीत में सुरों की पूरी संभव श्रेणी पे पकड़ रखती थीं। इतनी प्रतिभा का होना कुदरत का अजूबा है जिसे सारा विश्व मान चुका है। इसके बावजूद जीवन के शुरुआती दौर में संघर्ष होने की वजह से उन्हें रियाज़ करने का पर्याप्त समय नहीं मिल पाता था और उनका शास्त्रीय गायिका बनने का सपना अधूरा रह गया। अपितु सभी शास्त्रीय गायक उन्हें बड़े आदर-भाव से सम्मान करते थे

क्योंकि फिल्मी गीतों में उनकी जैसी गहराई और उनके जैसा निखार लाना असंभव के निकट मालूम होता था।

पिछले कुछ सालों में आने वाले संगीत और गीतों के बोलों की गुणवत्ता में आई गिरावट को देख लता जी का मन उद्विग्न रहता था। 2010 के बाद उन्होंने बेहद कम गीत गाए। अपनी आवाज़ से दुनिया भर में भारतीय संस्कृति और सभ्यता की पहचान बनाने वाली भारत कोकिला इस पतन से परेशान थीं। फरवरी 06, 2022 को कोरोना के कारण उनकी मृत्यु के पश्चात् देश एवं दुनिया के सभी चाहनेवालों ने उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि दी, परंतु इतना ही काफी नहीं है। हमें गीतों के बोलों में फिर से वही अर्थ, सुरमय रस पैदा करना होगा। आजकल बिकने वाले फूहड़ संगीत को भुलाकर वही अनुठे हृदयभेदन रागों को लाना होगा, तभी लता जी की स्मृति को सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित हो सकेगी।

महिला-उत्पीड़न पर जागरुकता कार्यक्रम

तुम

जितेन्द्र कुमार ठाकुर
तकनीकी सहायक
द्र.नो.प्र.कें. वलियमला

हलाहल के सागर में, तुम
अमृत की आश हो
तिमिर की गहराइयों में, तुम
पूनम का प्रकाश हो।

सूनी शहर में, तुम
अपनत्व का एहसास हो
शून्यता के शिखर पर, तुम
पूर्णता का महाकाश हो।

चिलचिलाती धूप में, तुम
बरगद की छांह हो
जड़-सी पड़ी काया में, तुम
चेतना का प्रवाह हो।

कबीर की अक्खड़ता, तुम
बिहारी का श्रृंगार हो
निराला का प्रगीत, तुम
दिनकर का हुंकार हो।

जीवन के कुरुक्षेत्र में, तुम
गीता का सार हो
तन्हा-सी जिन्दगी में, तुम
पूरा परिवार हो।

हार की दहलीज पर, तुम
जीत का विश्वास हो
मंज़िल तक जाये, तुम
वो अथक प्रयास हो।

सूर की भक्ति, तुम
शिव की शक्ति हो
आनंद के क्षण में, तुम
जीवन की मस्ती हो।

औरों के लिए फूल, तुम
मेरा गुलदस्ता हो
सब को राह दिखाती, तुम
मेरा रास्ता हो।

घर वालों की जान, तुम
मेरा अभिमान हो
इश्क नहीं, तुम
मेरी पहचान हो।

अध्यक्ष, इसरो का आधिकारिक दौरा

परीना शर्मा
सुपत्नी - गौरव शर्मा
वैज्ञा./इंजी एस एफ
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

हमारी राजस्थान यात्रा

भारतवर्ष के पश्चिम में स्थित राजस्थान एक ऐसा राज्य है जो अपने महलों, राजवंशों की रियासतों एवं मरुस्थल के लिए जाना जाता है। राजस्थान का खान-पान पहनावा और वहाँ के रहन-सहन बाकी सब राज्यों से एकदम अलग एवं थोड़ा अद्‌भुत हैं। राजस्थान में अनेक राजवंश हुए। वहाँ समय-समय पर अलग-अलग राजाओं का राज रहा। राजवंशों के आपसी मतभेद, मुगल बादशाहों की महत्त्वाकांक्षाओं एवं अंग्रेजों की कूटनीतियों के कारण राजस्थान की मिट्टी ने छोटे से लेकर बहुत बड़े युद्ध देखे। इन युद्धों का प्रभाव और संघर्ष का परिचय आज भी वहाँ के महलों एवं किलाओं की दीवारों- दरवाजों पर अंकित हैं।

इतनी दिलचस्प कहानियों के बारे में और अच्छे से जानने और समझने के लिए इस बार हमने राजस्थान की यात्रा की।

दिल्ली से रात में रेलगाड़ी का सफर करते हुए अगले दिन सुबह हम जोधपुर पहुंचे, वहां पर दो रात रुकने के बाद हम निकल पड़े 3 दिनों के लिए उदयपुर की सैर पर। उदयपुर से फिर जोधपुर होते हुए रेलगाड़ी से वापस हम दिल्ली आए।

आइए, इस लेख के माध्यम से हम जोधपुर एवं उदयपुर के प्रसिद्ध पर्यटक-स्थलों का कुछ विवरण देते हैं।

उम्मेद भवन

ऐसा माना जाता है कि उम्मेद भवन भारतवर्ष का नवीनतम महल है। बाकी महलों से उम्मेद भवन की आयु काफी कम है, इसका अंदाजा यहां के आधुनिक निर्माण को देखकर लगाया जा सकता है। यहाँ पर प्राचीन समय की गाड़ियों की प्रदर्शनी देखने योग्य है। महल के एक हिस्से को होटल में तब्दील किया गया है और दूसरे हिस्से में आज भी राजवंश के वंशज रहते हैं, जबकि आखिरी हिस्से को संग्रहालय बनाया गया है।

मेहरानगढ़ किला एवं जसवंत ठाडा

राव जोधा द्वारा निर्मित मेहरानगढ़ किला 122 मीटर ऊंची पहाड़ी पर स्थित है। इस किले में किताबों के संग्रहालय से लेकर वहां के लोक गायक, फूल महल, मोती महल, शीश महल, दौलत खाना, चामुंडा मंदिर, खानपान एवं खरीदारी के सामान इत्यादि देखने योग्य हैं। यह किला बाहर से देखने में बहुत विशाल प्रतीत होता है। 18वीं सदी में जयपुर और जोधपुर रियासतों के जंग के निशान आज भी इस किले के दरवाजों और दीवारों पर देखे जा सकते हैं। इस किले के ऊपरी भाग से जोधपुर शहर का नजारा देखने को मिलता है। वहाँ अधिकतर घर नीले रंग से रंगे हुए हैं।

किले से थोड़ी दूर पर मौजूद है जसवंत ठाडा, जो संगमरमर के पत्थरों से बनाया गया है और सूर्य की रोशनी पड़ने पर चमकता है। ठाडा के पास सैर करने के लिए झील और मनोरंजन के लिए लोक-गायक देखे जा सकते हैं।

जोधपुर घंटाघर बाजार

यूँ तो इस बाजार में खरीदने योग्य काफी सामान देखे जा सकते हैं, लेकिन कुछ वस्तुएं जैसे - बंधेज लहरिया के वस्त्र, लाख की चूड़ियाँ, जूतियाँ एवं अनेक स्थानीय सामान मशहूर हैं। यहाँ खाने-पीने से संबंधित प्याज-मावे की कचौरियाँ एवं लस्सी प्रसिद्ध हैं।

शाकाहारी होटल

जोधपुर में एक और अद्भुत होटल का नजारा देखने को मिला जहां पर आपका भोजन एक खिलौने वाली रेलगाड़ी लेकर आपके टेबल पर आती है। बच्चों के लिए यह अनुभव बहुत लुभावना रहा।

जगदीश मंदिर (उदयपुर)

उदयपुर शहर के मध्य सिटी पैलेस के बाहर भगवान विष्णु के इस मंदिर का निर्माण सन् 1651 में किया गया। यह मंदिर आज भी उदयपुर का सबसे बड़ा मंदिर है और इसमें तीन मंजिलों तक पत्थरों की नक्काशियाँ देखी जा सकती हैं। अधिकांश पर्यटक उदयपुर शहर को दखेने की शुरुआत इसी मंदिर से करते हैं।

सिटी पैलेस

महाराणा उदय सिंह जी के द्वारा निर्मित 16वीं शताब्दी का यह महल राजस्थान का सबसे बड़ा महल माना जाता है। लेक पिचोला के किनारे स्थित यह उदयपुर का सिटी पैलेस एक देखने योग्य महल है। इस महल के चारों तरफ उदयपुर का बाजार है। महल के सबसे ऊंचे माले से एक ओर उदयपुर शहर का नजारा दिखता है, वहीं दूसरी ओर लेक पिचोला में स्थित जग मंदिर एवं ताज लेक पैलेस दिखते हैं। अद्भुत कलाकृतियों से भरपूर यहाँ का नजारा बहुत मनमोहक है, इस महल में देखने के लिए मानक चौक, मोर चौक, रंग भवन, शीशमहल इत्यादि प्रसिद्ध हैं।

करणी माता मंदिर एवं रोपवे

यह करणी माता का मंदिर दूध तलाई झील के नजदीक एक पहाड़ी की चोटी, जिसका नाम मचला मगरा है, पर स्थित है। यहाँ या तो आप पदयात्रा करके पहुँच सकते हैं या रोपवे/केबल कार द्वारा हवाई यात्रा करके। मंदिर पर पहुँचकर आप माता के दर्शन के उपरांत झीलों से भरे उदयपुर शहर के मनमोहक नजारों का लुत्फ़ उठा सकते हैं।

लेक पिचोला बोटिंग

लेक पिचोला झील में बोटिंग करना अपने-आप में एक अद्भुत अनुभव है। शाम के समय इस बोटिंग का रेट लगभग डेढ़ गुना तक कर दिया जाता है। सूर्यास्त के समय उदयपुर सिटी पैलेस एक स्वर्णमहल-जैसा चमकता है। ठंडी हवा के झोंकों के साथ आप जगमंदिर होटल, ताज लेक पैलेस होटल एवं ओबेरॉय होटल में जगमगाती रोशनियों का नजारा देख सकते हैं।

महाराणा प्रताप संग्रहालय हल्दीघाटी

वीर महाराणा प्रताप की वीरता को दर्शाता यह संग्रहालय सन् 2003 में श्री मोहनलाल श्रीमाली द्वारा बनवाया गया। इस संग्रहालय में महाराणा प्रताप के बचपन, उनकी वीरता के किस्सों एवं मुगलों से उनके युद्धों का विस्तार से वर्णन किया गया है। यहाँ पर महाराणा प्रताप के प्रसिद्ध घोड़े चेतक का स्मारक भी है। ऐसा माना जाता है कि चेतक ने युद्ध में एक पैर से जख़्मी होने के बाद भी घायल महाराणा प्रताप को नदी पार करा के एक सुरक्षित स्थान पर पहुंचाया था। यहाँ हमारी मुलाकात इस संग्रहालय के निर्माता श्री मोहनलाल जी से भी हुई।

मोहनलाल जी ने एक अध्यापक की नौकरी से इस्तीफा देकर अपना संपूर्ण जीवन इस संग्रहालय के निर्माण और महाराणा प्रताप के यश-पराक्रम के प्रचार-प्रसार में लगाया है। मोहनलाल जी की शख़्सियत और उनके कार्य वास्तव में सराहनीय हैं।

श्रीनाथ जी मंदिर

कृष्ण भगवान का यह मंदिर सन् 1672 में उदयपुर से 48 किलोमीटर की दूरी पर नाथद्वारा में स्थित है। माना जाता है कि यहाँ मौजूद कृष्ण भगवान की मूर्ति मथुरा के गोवर्धन पर्वत पर स्वयं प्रकट हुई थी। वहां से इस मूर्ति को उदयपुर के श्रीनाथ मंदिर में पुनर्स्थापित किया गया। इस मंदिर की बहुत ही मान्यता है और श्रद्धालु-गण देश-विदेश से श्रीनाथजी के दर्शन के लिए यहाँ आते हैं।

जगमंदिर होटल

लेक पिचोला में स्थित जगमंदिर एक होटल है, पर्यटक यहाँ नाव से जा सकते हैं। जगमंदिर को शादी-ब्याह या और किसी समारोह के लिए भाड़े पर दिया जाता है। चारों तरफ से पानी से घिरा यह होटल बहुत अद्‌भुत दिखता है। बहुत-सी पुरानी फिल्मों की शूटिंग भी यहीं पर हुई है।

इस लेख में राजस्थान के बस दो प्रमुख पर्यटक-शहरों, जोधपुर और उदयपुर का वर्णन किया गया है। इन शहरों के अलावा, जयपुर, जैसलमेर, चित्तौड़गढ़, माउंट आबू, बीकानेर, अजमेर, कोटा, अलवर और सवाई माधोपुर — जैसे शहरों की गिनती भी ऐतिहासिक शहरों एवं पर्यटन-स्थलों में होती है। हमें उम्मीद है कि पश्चिम भारत की यात्रा के दौरान फिर कभी इन पर्यटक-स्थलों को भी करीब से देखने का हमें अवसर प्राप्त होगा।

कोरोना से बचाव

सुमित कुमार
वरि. सहायक
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

कोरोना कोरोना कोरोना
कोरोना हो रहा हर देश हर शहर
दुनिया के हर देश में बरसा रहा अपना कहर

सुन मेरी बात कोरोना से ना डर
छोटी-छोटी बातें और छोटे से उपाय कर
कोरोना से बचना है तो
पब्लिक प्लेस से बच और रह अपने घर

मजबूरी है जिसकी जाने की
बात है पापी पेट और खाने की
तो कोई बात नहीं
किसी बात का डर नहीं

घर से निकल तू मास्क लगा कर
लोगों से बात करना
एक मीटर की दूरी बनाकर

सुन मेरी बात कोरोना से ना डर
छोटी-छोटी बातें और छोटे से उपाय कर
कोरोना से बचना है तो
पब्लिक प्लेस से बच और रह अपने घर

ना बात मिला ना हाथ मिला
ना मुंह लगा ना गले लगा
ऐडवाइज है सबको पहन हाथ में ग्लव्ज़
और मुँह पे अपने मास्क लगा
भीड़-भाड़ से दूर रहकर
खुद को बचा और दूसरों को भी बचा

गंदगी से बच, सफाई कर
बीस सेंकड तक हाथ धो
और खुद को सैनेटाइज कर
बस इतनी सी सावधानी
फिर किस बात का है डर

सुन मेरी बात कोरोना से ना डर
छोटी-छोटी बातें और छोटे से उपाय कर
कोरोना से बचना है तो
पब्लिक प्लेस से बच और रह अपने घर

इसरो में टर्बो पंप प्रणाली के विकास पर समीक्षा - बैठक

हिंदी सप्ताह समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह

डॉ. एम अरुमुगम, समूह निदेशक, क्यू सी एन जी, एस आर क्यू ए, एल पी एस सी द्वारा व्याख्यान

टीम उत्कृष्टता पुरस्कार

डॉ ज़ेवियर एम, समूह निदेशक, सी एफ एस एल जी द्वारा व्याख्यान

निदेशक द्वारा एल पी एस सी के नवीनीकृत इतिहास घटनाक्रम का उद्घाटन

संस्कृति

के एन सरस्वती
नियंत्रक
द्र.नो.प्र.कें.

संस्कृति मस्तिष्क की प्रोग्रामिंग है जिससे भिन्न-भिन्न वर्गों के लोग अपने-आपको एक-दूसरे से अलग महसूस करते हैं। यह किसी खास स्थान पर रहने वाले लोगों के समूह की पहचान होती है। उनकी अपनी खास जीवन-शैली होती है जो उनकी संस्कृति से निर्धारित होती है। हमने देखा है कि कुछ लोग अपनी संस्कृति को ध्यान में रखते हुए कुछ विशेष कार्यों को करते हैं और इस बात का पूरा-पूरा ख्याल रखते हैं कि वे कार्य सांस्कृतिक मानदंडों के अनुसार ही संपन्न हों। विशेष रूप से शादी के अवसर पर और कुछ आयोजनों पर वे सांस्कृतिक मूल्यों एवं प्रचलनों का सख्ती से अनुसरण करते हैं। भिन्न-भिन्न लोग संस्कृति को भिन्न-भिन्न तरीकों से परिभाषित करते हैं। इसे मनुष्य आत्मसात कर अपनी जीवन-शैली में उतारता है। संस्कृति मनुष्य के दैनिक जीवन-शैली और सामाजिक मेल-जोल में दृष्टिगोचर होती है। मानव अपनी संस्कृति में स्वाभाविक रूप से ढल जाता है या रच-बस जाता है। इस प्रकार संस्कृति मस्तिष्क का सामूहिक प्रोग्रामिंग है जिससे एक समुदाय के लोग दूसरे समुदाय के लोगों से अपनी अलग पहचान स्थापित करते हैं। इन बातों से यह स्पष्ट होता है कि संस्कृति पहले ग्रहण की जाती है और फिर उसका प्रचार-प्रसार किया जाता है। यह सामान्य सी बात है कि बच्चे पहले अपने बड़ों से संस्कृति की शिक्षा लेते हैं और ये बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो यह शिक्षा अगली पीढ़ी को स्थानांतरित करते हैं। ग्रहण की गई संस्कृति में मानव अंतर्व्यहार के सभी पहलू शामिल हैं।

संस्कृति की अपनी कुछ खास विशेषताएँ निम्नवत हैं:

(1) सामाजिकता (2) ग्राह्यता (3) स्थानांतरणीयता (4) सतता (5) परिवर्तनशीलता

सामाजिकता: संस्कृति एक प्रकार की निर्देशात्मक व्यवस्था होती है जो समाज को प्रभावित करती है तथा विभिन्न समूहों के लोगों का मार्ग-दर्शन करती है एवं उनके लिए मर्यादाएँ निर्धारित करती है। संस्कृति कोई व्यक्तिगत घटना नहीं होती है, बल्कि एक सामाजिक घटना होती है। इसकी उत्पत्ति समाज में होती है और सामाजिक मेल-जोल से इसका विकास होता है एवं प्रचार-प्रसार होता है। किसी संस्कृति की विशिष्टताओं को जानने के लिए यह आवश्यक है कि उस संस्कृति की तुलना किसी अन्य संस्कृति से की जाए। यह समाज का अभिन्न हिस्सा होती है, समाज के बिना इसकी संकल्पना संभव नहीं है।

ग्राह्यता: संस्कृति समाज और परिवार के अग्रजों से ग्रहण की जाती है, इसे पुस्तकीय ज्ञान से अर्जित नहीं किया जा सकता। यह व्यक्ति को विरासत के रूप में मिलती है। हम समाज में रहकर जो कार्य करते हैं, जो आचरण करते हैं, जो वस्त्राभूषण धारण करते हैं या जो भोजन करते हैं, उन पर संस्कृति की अमिट छाप होती है। नन्हें-मुन्ने इसे माँ-बाप एवं अग्रजों के क्रिया-कलापों को देख कर ग्रहण करते हैं, उनके व्यवहारों का अनुकरण करते हैं और समय के साथ वे अगल-अलग भूमिकाओं को स्वीकारते हैं।

स्थानांतरणीयता: आदान-प्रदान से संस्कृति एक भू-भाग से

दूसरे भू-भाग तक प्रसारित होती है। संस्कृति के प्रचार-प्रसार या आदान-प्रदान के लिए सामान्यतः संस्कृति-ग्रहण पद का प्रयोग किया जाता है। इसका का आदान-प्रदान कई माध्यमों से होता है, जिनमें से भाषा एक सशक्त माध्यम है। आज के दौर में सामूहिक वाद-विवाद, लोक-व्याख्यान तथा संचार माध्यमों यथा टीवी, इंटरनेट आदि के जरिए ज्ञान का प्रचार-प्रसार होता है और सांस्कृतिक मूल्य इन्हीं के साथ पूरे विश्व में प्रसारित होते हैं।

सततताः संस्कृति एक सतत प्रक्रिया होती है। इसकी प्रवृति संपूर्णता की ओर अग्रसर होने की होती है और इसमें अतीत और वर्तमान की उपलब्धियों के साथ ही मानव-समाज के लिए भावी संभावनाएँ एवं प्रत्याशाएँ सन्निहित होती है। संस्कृति अतीत एवं वर्तमान में आए परिवर्तनों के कारण संवर्धित होती है। इसमें अतीत और वर्तमान के अनंत अनुभव समाहित होते हैं। यह प्रक्रिया एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सतत आगे बढ़ती रहती है।

परिवर्तनशीलताः संस्कृति सदैव अनुकूलनीय होती है, इसमें बदलाव भी आते हैं, लेकिन अत्यंत धीरे-धीरे। जब संस्कृति में कुछ परिवर्तन आ जाते हैं तो उस संस्कृति से संबंधित लोग उसी के अनुसार ढल जाते हैं। संस्कृति में कई तत्त्व समाहित हैं - यथा, मूर्त एवं अमूर्त तत्त्व, वस्त्राभूषण-धारण, भवन निर्माण-कला, पारिवारिक परिवेश, धर्म, शिक्षा आदि। ये सभी तत्त्व एक समाज से दूसरे समाज में प्रायः बदल जाते हैं, लेकिन बदलाव की यह प्रक्रिया अत्यंत धीमी होती है।

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि संस्कृति राष्ट्र की पहचान होती है। इसके बिना समाज कि परिकल्पना अर्थहीन है। यह किसी विशिष्ट समाज या समुदाय का प्रतिनिधित्व करती है। गंभीर समस्याओं से जूझ रहे समाज को संस्कृति मार्ग-दर्शन करती है, उन समस्याओं का समाधान करती है। संस्कृति से परिवार एवं राष्ट्र की संकल्पना साकार होती है। यह किसी समाज या समुदाय की आधारशीला होती है।

संपूर्ण मानव बनने के लिए व्यक्ति को अपने समाज और दूसरे समाज की संस्कृतियों को समझना चाहिए, उनके मूल्यों को आत्मसात करना चाहिए। वह व्यक्ति ही सच्चे अर्थों में एक सभ्य एवं सुसंस्कृत मनुष्य होता है, जो अपनी संस्कृति के साथ-साथ दूसरी संस्कृतियों का भी सम्मान करता है।

अभिनव उपाध्याय
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

गज़लः आज भी जब कोई

आज भी जब कोई ख्याल ज़ेहन में उठता है
उसके मन की रुख़सत से मेरा जनाज़ा-सा उठता है

वो ऐश में रहते हैं, कोई बतलाए न उनको
उनकी मुहब्बत की आग में किसी का जी घुटता है

कहने को कभी मिले नहीं, फिर ये क्या बेचैनी है
उसकी याद के पत्थर से, झील में भँवर-सा उठता है

जवानी की ठिठोली में, दिल्लगी करती रही वो
इश्क़ मानकर पगला दिल, बंदगी में झुकता है

जब कभी हँसकर वो, मुझको अपना कह देती है
बहारों की रात में, मदमस्त भ्रमर गूँज उठता है

जिस रोज़ से मालूम हुई है, रक़ीब की हकीकत
अक्ल की बेख्याली से मन का सुकून लुटता है

मेरी लज़्ज़त की सोच को, जब खुल के ठुकराती है
दर्द भरी मुस्कान से मेरा, चेहरा खिल उठता है

जब उस समेत सारी दुनिया ने नाकारा करार दिया
मुहब्बत को छोड़ अब 'सागर', बाकी कामों में जुटता है।।

संकेत अग्रवाल
वैज्ञा/इंजी-एस डी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

युद्ध... बचपन और अहंकार

वो सहमा हुआ-सा बचपन था,
वो डरी हुई-सी कोई भूख थी...
कैद कर गया खुले आसमां में,
ना जाने किससे हुई वो चूक थी...

उपर्युक्त तस्वीर कुछ ऐसे ही हालातों का व्याख्यान कर रही है। बचपना भी दरअसल दो प्रकार का होता है, पहला जो पूर्णरूपेण नादान होता है, तो दूसरा, समझदार और थोड़ा सा मजबूत होता है।

तस्वीर की बाईं तरफ पहले प्रकार का बचपन है जो पूर्णतः आसपास के वातावरण से, या यूं कहें कि दुनिया में चल रहे माहौल से अनभिज्ञ है, वहीं दूसरी ओर दाएं तरफ एक सहमा हुआ-सा, समझदार-सा बचपन है जो थोड़ा बहुत समझ चुका है। हालात क्या है इर्द-गिर्द, पर कुछ भी कर पाने में असमर्थ है या, मजबूर है परिस्थितियों को ज्यों की त्यों बर्दाशत करने के लिए।

पास पड़ी सूखी लकड़ियां भी मानों गुफ़्तगू कर रही हों, हमारी इस दशा की जिम्मेदार मजबूरी है। हम वृक्ष एक दूसरे की स्थिति तो समझ पाते हैं पर चाह कर भी मदद नहीं कर पाते हैं। अगर हम एक-दूसरे की वक्त रहते मदद कर पाने में असहाय नहीं होते तो हम जरूरत के समय जल प्रदान कर पाते, कुल्हारी के वार को रोक पाते आदि, पर हम इन सब के लिए असमर्थ थे, और इसी वजह से आज हमारी यह दुर्दशा हुई।

पर, यह मानव जाति तो बहुत ही निर्मम होती है, ज्ञात होते हुए भी, सहायता करने के क़ाबिल होते हुए भी, यह युद्ध करके खुद को और समस्त संसार को विनाश की ओर ले जाती है।

हममें और इंसानों में बस फ़र्क इतना-सा है कि हम चाहकर भी मदद नहीं कर सकते और इंसान मदद करना ही नहीं चाहता।

काश! कोई हथियार परमाणु, अंहकार मिटाने वाला बना होता,
युद्ध-जैसा कुछ होता है, दुनिया ज़माने को कहाँ कुछ पता होता।

इजाज़त तो हाथ में लटकी बंदूक का जमीर भी नहीं देगा कि वो सामने बैठे दो मासूमों पर अपना वार करे। एकटक ताक रहा है मासूम उस बंदूक को, जिसने ना जाने इस छोटे-से जीवन में क्या कुछ मिलने से पहले ही खो दिया है। माता-पिता का साया नहीं है शायद इसलिए बंदूक में ही कहीं छिपी अपनी मां को ख़ोज रहा है।

भले ही बंदूक में प्राण नहीं पर गोलियाँ बंदूक के गर्भ में रहती हैं, इस प्रकार से बंदूक उनकी माँ समान हुई, और दुनिया की कोई भी माँ, किसी भी शिशु पर, फिर वो चाहे अपना हो या पराया, एक समान ममता बिखेरती है। तो फिर ये दो सहमे हुए मासूमों पर माँ बंदूक से भला कैसे वार कर सकती है।

बंदूक ना जानें कितनों को मार गिराती है, नरसंहार करती है, फिर वह कैसे माँ हुई? तो याद करें कि "दुर्गा" भी एक माँ है, "सरस्वती" भी एक माँ है तो "काली" भी एक माँ है, जो दुनिया को बचाने के लिए एक रौद्र रूप भी धारण कर सकती है। शायद कुछ इसी तरह से बंदूक भी एक इसी प्रकार की माँ है और शायद वह बालक के इस नन्हें स्वभाव को देखकर शांत हो जाए।

६

युद्ध तो बरसों से चला आ रहा है, युगों-युगों से, पहले तीर, कमान, भाला से होता था तो अब बम, बारूद से होता है। मूल रूप से देखा जाए तो युद्ध लड़ने के तरीके बदले हैं, पर कारण

आज भी एक ही है, और वह है ''अंहकार''। कभी अंहकार की ज्वाला में पूरी तरह से लंका जली, तो कभी कंस नगरी, ना जाने कितनी ही और रियासतें ध्वस्त हुईं, ना जाने कितनी पीढ़ियाँ नष्ट हुईं।

बरसों से चले आ रहे युद्धा की मुख्य वजह अंहकार है। पहले तीन युगों - सतयुग, त्रेतायुग और द्वापरयुग से चली आ रही वजह को अब इस युग में (कलयुग) हमेशा के लिए नष्ट करना है, जिससे आने वाली पीढ़ियाँ, आने वाले युगों में कलयुग के अंहकार को नष्ट करने वाले युग के नाम से जाने।

हर युग में ''भगवान'' ने अवतार लेकर अंहकार का नाश किया है, मानव जाति का उद्धार किया है। हमें इस युग में पिछले युगों से सीख लेकर ख़ुद ही उद्धरण लेना है, और अगर भगवान का पुनः अवतार होता है तो इस युग में हमें उन्हें प्रफुल्लित करना है ना कि पिछली स्थितियाँ दोहराने का अवसर दिलवाना है।

अगर अंहकार नष्ट होगा तो युद्ध की परिस्थितियाँ कभी उत्पन्न ही नहीं होंगी, हर एक का बचपन ख़ास होगा, हर जिंदगी ख़ास होगी और सबसे बड़ी चीज कि जिंदगी होगी।

जिंदगी, मनुष्य को प्रकृति का दिया गया सबसे बड़ा उपहार है...

मैं अब भी तेरे इंतज़ार में हूँ

सूरज अग्रवाल
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

ये कैसा नशा है मैं किस अजीब ख़ुमार में हूँ
तू आ के जा भी चुका है मैं अब भी तेरे इंतज़ार में हूँ।

नए शहर नए मुकाम एक नए पायदान पर हूँ
फिर भी दोधारी तलवार लिए युद्ध के किसी मैदान में हूँ।

अपने बस में हूँ या किसी और की कमान में हूँ
उन ढकोसलों भरी यादों से निज़ात पाने के एतबार में हूँ।

नए दोस्त नई शुरुआत एक नए परिवार में हूँ
चेहरे पे मुस्कान लिए ना जाने सफर के किस दयार में हूँ।

अपने घर में हूँ या किसी आलीशान बागान में हूँ
अपना सब दांव पर लगा मंजिल पाने के इख़्तियार में हूँ।

ये कैसा नशा है मैं किस अजीब ख़ुमार में हूँ
तू आ के जा भी चुका है मैं अब भी तेरे इंतज़ार में हूँ।

सागर प्रेम

मंजु एस नायर
वैज्ञा./इंजी. एस जी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

महासागर पृथ्वी का 70% हिस्सा है और इसकी जैव-विविधता अतुलनीय है। सागर ही पृथ्वी पर जीवन को संभालता है। सागर के बिना पृथ्वी पर जलवायु नियंत्रित करना और वांछित ऑक्सीजन स्तर बनाए रखना असंभव है। इनमें से कुछ भी जानने से पहले, मैं बचपन से ही सागर से बहुत सम्मोहित रही हूँ। इसका कारण तो मेरे बचपन की ज़िन्दगी है जो समुद्र के पास व्यतीत हुई।

मेरा जन्म शहर में ही हुआ और मैंने पढ़ाई-लिखाई भी पास के विद्यालय में की। उस समय मेरे पिताजी का अप्रत्याशित स्थानांतरण हुआ। उनका नया कार्यालय समुद्र के बिल्कुल पास था। परिवार के हम सभी सदस्यों ने उनके साथ क्वार्टर में रहने का मन बनाया। मैं तो अपने विद्यालय में बहुत सारे दोस्तों के साथ अपना अच्छा समय बिता रही थी। इसके अलावा मैं कक्षा-नेत्री के रूप में भी दायित्व का आनंद उठा रही थी। मैंने स्कूल न छोड़ने की कोशिश भी की। परंतु परिवहन-सुविधा की कमी और यात्रा की अधिक दूरी ने तो मेरे सारे प्रयासों को विफल कर दिया। इसलिए मैं बहुत दुख के साथ अपने सारे दोस्तों को छोड़कर एक नई जगह और एक नये विद्यालय का हिस्सा बनने के लिए तैयार हो गई। परंतु मुझे पता नहीं था कि मेरे लिए कौन-सा आश्चर्य इंतज़ार कर रहा था।

मैं अपने नये स्कूल की पहले दिन की यात्रा को कभी नहीं भूल सकती। उस दिन मैं विद्यालय में प्रवेश करने के लिए अपने माता-पिता के साथ पैदल गई। रास्ते में कुछ दूर जाने के बाद मैंने अत्यंत सुंदर-सा एक दृश्य देखा। चमचमाता नीला सागर मेरी अचरज भरी आँखों के सामने था। एक तरफ नीला सागर क्षितिज पर नीले आकाश को छू रहा था, तो दूसरी तरफ सुनहरी रेत इस सुंदरता को और बढ़ा रही थी। नीले रंग की विशालता पर सफेद लहरें पूरी सुंदरता में चार चांद लगा रही थीं। इस खूबसूरत नज़ारे को देखकर मैंने सुनहरे बॉर्डर और सफेद लहरदार पैटर्न की एक नीली रेशमी

साड़ी की कल्पना की। मैं अपने जीवन में पहली बार समुद्र देख रही थी और उस वक्त से उससे मुझे प्यार हो गया। मुझे उस खूबसूरत दृश्य को छोड़ने का मन नहीं कर रहा था।

विद्यालय और घर बहुत दूर नहीं होने के कारण मैं रोज़ विद्यालय पैदल ही आती-जाती थी। इसके कारण मुझे रोज़ सुबह और शाम के समय सागर की सुंदरता का रसास्वादन करने का सौभाग्य प्राप्त होता था। शाम के वक्त पानी में पांव गीला करने और रेत में खेलने के लिए मैं समय निकाल लेती थी। नमकीन हवा से मेरी सारी चिंतायें दूर हो जाती थीं। धीरे-धीरे मुझे अपने स्कूल में नए दोस्त मिले और वहाँ भी कक्षा-नेत्री बनी। स्कूल के ये दोस्त अब भी मेरे सबसे अच्छे दोस्त हैं।

अधिकांश सप्ताहांतों में मेरे चचेरे भाई-बहन हमसे मिलने आते थे। हमें फिल्म देखने और समुद्र तट पर भ्रमण के विकल्प दिये जाते थे, ज्यादातर समय मैंने समुद्र के किनारे भ्रमण को चुना। हम समुद्र में काफी समय तक खूब गेंद खेलकर और पूरी तरह भींग कर घर लौटते थे। लौटते वक्त हम दौड़ भी लगाते थे। इन सभी कारणों से वे हमसे मिलना बहुत पसंद करते थे और हर सप्ताहांत का बेसब्री से इंतज़ार करते थे।

कुछ सालों बाद हम शहर लौट आये। लेकिन समुद्र के प्यार ने मुझे कभी नहीं छोड़ा। बड़े होने पर मुझे समुद्र में उतरने की अपेक्षा उसके किनारे बैठकर लहरों को देखना अधिक पसंद था। जब भी मुझे समय मिलता, मैं समुद्र तट पर चली जाती थी। ब्रह्मांड के चार तत्त्वों को एक साथ देखकर मैं ध्यान की अवस्था में चली जाती हूँ। एक बार समुद्र के नीचे घूमने का अवसर (जिसे सी-वॉक कहते हैं) भी मिला। समुद्र के अंदर विभिन्न प्रकार की मछलियाँ और जीवन के विविध रूप मुझे बहुत ही सम्मोहित किये। इससे मुझे समुद्र का एक अलग दृष्टिकोण मिला।

समय के साथ मैंने देखा कि हम लोग समुद्र और समुद्र तट को साफ-सुथरा रखने में लापरवाही बरतते हैं। प्लास्टिक कचरा समुद्र में फेंकना समुद्री जीव-जंतुओं के जीवन के लिए हानिकारक हो सकता है। ये महासागर ही पृथ्वी के लिए जीवन रक्षक हैं। समुद्र और उसके जीवन को संरक्षित करना हमारी जिम्मेदारी है ताकि पृथ्वी की जैव-विविधता बनी रहे। इसलिए लोगों की इन हरकतों को देखकर मैं बहुत परेशान हो जाती हूँ और दृढ़ता से महसूस करती हूँ कि लोगों में इसके प्रति जागरूकता फैलाने की जरूरत है।

समय के साथ सागर के प्रति मेरा प्यार कम नहीं हुआ बल्कि इतना बढ़ गया कि मैने समुद्र के नज़ारों वाला घर अपने लिए चुना। मेरी आदत बन गई - सुबह सबसे पहले समुद्र को देखना और रात का वही आखिरी दृश्य देखना। सुबह से शाम तक उसका रंग-परिवर्तन प्रकृति की चतुराई एवं जादूगरी का सबूत नहीं तो और क्या हो सकता है? मछली पकड़ने वाली नावों की रोशनी रात में मोर-पंखों में बह रहे घेरों-जैसी लगती है।

मुझे पूरा यकीन है कि सागर की गहराई, इसकी सुंदरता और इसके विस्तार के प्रति मेरा प्रेम, विस्मय एवं आश्चर्य आखिरी सांस तक यूँ ही बना रहेगा। मुझे आशा है कि हम सभी अपने महासागरों और महासागरीय जीवन को संरक्षित करने का संकल्प लेंगे।

गणतंत्र दिवस के अवसर पर निदेशक महोदय के कर कमलों से **नोदन मुकुर** के 9वें अंक का विमोचन

कुमारी अभिरामी आर
सुपुत्री रम्या एस यू
वरि. सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

गुरुकुल से आभासी तक: शिक्षा की यात्रा

"शिक्षा तथ्यों का अध्ययन नहीं है,
बल्कि सोचने के लिए मन का प्रशिक्षण है।"

- अल्बर्ट आइंस्टीन

शिक्षा एक ऐसी विधा है जिसमें युवा पीढ़ियों को प्रशिक्षित किया जाता है और उन्हें भविष्य के लिए तैयार किया जाता है। शिक्षा से ज्ञान और कौशल प्राप्त होता है, जिनसे किसी व्यक्ति को रोज़गार हासिल करने में सहायता मिलती है। प्राचीन कालीन भारतीय शिक्षा पद्धति जो गुरुकुलों में गुरुओं के संरक्षण में प्रचलित थी, शिष्यों को प्रकृति की गोद में अत्यंत ही व्यवहारिक शिक्षा प्रदान करती थी और यह शिक्षा पद्धति पूरे विश्व में अनूठी और लोकप्रिय हुआ करती थी। जब हम प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति की तुलना आधुनिक शिक्षा पद्धति से करते हैं तो हमें बहुत बड़ा परिवर्तन दिखाई पड़ता है।

प्राचीन काल की शिक्षा पद्धतिः गुरुकुल विद्याभ्यास

प्राचीन और मध्यकाल में गुरु शिष्यों को इस प्रकार प्रशिक्षित करते थे ताकि शिष्य अपना जीविकोपार्जन कर सकें और अपना जीवन-बसर कर सकें। भारत के प्राचीन इतिहास में गुरुकुलों का अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ये ज्ञान-विज्ञान एवं शिक्षा के केंद्र हुआ करते थे। यहाँ विद्यार्थी-गण अपने परिजनों से दूर रहकर, गुरुओं के परिवार का हिस्सा बनकर शिक्षा ग्रहण करते थे। प्रसिद्ध आचार्यों के गुरुकुल में पढ़े हुए शिष्यों का सर्वत्र सम्मान होता था और उनमें से कई प्रकाण्ड पंडित बन कर लोक-कल्याण के कार्यों में रत रहते थे, समाज को सही दिशा प्रदान करते थे।

इस गुरुकुल शिक्षा पद्धति के अंतर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी कुलों, वर्णों के 6-11 वर्षों के बाल-वृंद शिक्षा ग्रहण के लिए गुरुकुलों में जाते थे तथा गुरु के सान्निध्य में ब्रह्मचारी के रूप में शिक्षा ग्रहण करते थे। गुरु उनको मानसिक और बौद्धिक रूप से सुसंस्कृत एवं सभ्य बनाते थे तथा उन्हें शास्त्र विद्या के साथ शस्त्र विद्या भी प्रदान करते थे। "विद्या ददाति विनयं विद्यातायाति पात्रताम्। पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात्धर्मः ततः सुखम्।।" - इसी आदर्श पर गुरुकुलों में पठन-पाठन का कार्य होता था। गुरु शिष्यों को यह शिक्षा देते थे कि "सुखार्थी त्यजते विद्यां विद्यार्थी त्यजते सुखम्। सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।।" अर्थात् सुख चाहने वाले को विद्या और विद्या चाहने वाले को सुख त्याग देना चाहिए। सुख चाहने वाले के लिए विद्या कहाँ और विद्यार्थी के लिए सुख कहाँ। बहुत ही परिश्रम एवं लगन से विद्या अर्जित करने के बाद गुरु से दीक्षा लेकर गार्हस्थ्य-जीवन के कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने के लिए शिष्य निकल पड़ते थे। दीक्षा प्राप्ति के बाद सभी गुणों से परिपूर्ण होकर शिष्य समाज का एक महत्त्वपूर्ण नागरिक बनता था तथा लोक-कल्याणकारी कार्यों में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देता था। भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं वाङ्मय के उत्थान में गुरुकुलों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

स्वतंत्रता-पूर्व शिक्षा पद्धति

ब्रिटिश राज में मैकॉले की नई शिक्षा नीति की शुरुआत हुई जिसने गुरुकुल शिक्षा पद्धति को धीरे-धीरे समाप्त कर दिया। वे चाहते थे कि प्रशासनिक कार्यों में सहायता के लिए भारतीयों को अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा प्रदान की जाए। वे भारतीय रीति-रिवाजों एवं प्रचलित नियमों को समझना चाहते थे। मैकॉले ने भारतीयों को शिक्षित करने के संबंध में यह प्रस्ताव दिया कि पारंपरिक भारतीय शिक्षा के स्थान पर लोगों को अंग्रेजी शिक्षा प्रदान की जाए। क्योंकि वह पारंपरिक शिक्षा को दोष-पूर्ण एवं अनुपयोगी मानता था। लेकिन भारतीयों पर अंग्रेजी शिक्षा थोपने का उद्देश्य भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पर कुठाराघात करना था ताकि ब्रिटिश हुकुमत बनी रहे। वह सभी को शिक्षित नहीं करना चाहता था, वह केवल उच्च एवं मध्यम वर्ग के लोगों को शिक्षा प्रदान करना चाहता था। वह चाहता था कि भारत में शिक्षित भारतीयों का एक ऐसा समूह बने जो रंग-रूप से तो भारतीय हों लेकिन अभिरुचि एवं निष्ठा से अंग्रेजी। मैकॉले के प्रयासों से कई अंग्रेजी माध्यम के स्कूल एवं कॉलेज खोले गए - जैसे एलफिन्सटन कॉलेज, कलकत्ता मेडिकल कॉलेज, मद्रास विश्वविद्यालय, बॉम्बे विश्वविद्यालय, कलकत्ता विश्वविद्यालय, पंजाब विश्वविद्यालय आदि। अंग्रेजी शिक्षा पद्धति अपनाने वाले इन स्कूलों, कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों के कारण भारत की पारंपरिक गुरुकुल शिक्षा पद्धति मृतप्राय-सी हो गई।

स्वतंत्रतोपरांत शिक्षा पद्धति

स्वतंत्रता के बाद, सरकार के द्वारा शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दिशा में कई महत्त्वपूर्ण प्रयास किए गए। सरकार ने 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का निर्णय लिया। पंचवर्षीय योजनाओं के बजट में शिक्षा के लिए विशेष बजट प्रावधान किए गए। कई महत्त्वपूर्ण शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना की गई ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि छात्रों को उच्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो। तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए आई आई टी, एन आई टी जैसे प्रतिष्ठित संस्थानों की स्थापना हुई। साथ ही प्रबंधन के क्षेत्र में शिक्षा प्रदान करने के लिए आई आई एम जैसे प्रतिष्ठित प्रबंधन संस्थान अस्तित्व में आए। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में लड़के एवं लड़कियों को समान अवसर प्रदान करने पर जोर दिया जा रहा है ताकि समाज का सर्वांगीण विकास हो सके। आज शिक्षा के क्षेत्र में तकनीकी का प्रयोग शिक्षण को और अधिक सुविधा युक्त बना रहा है। हम घर बैठे ऑनलाइन माध्यम से कई विषयों का अध्ययन कर सकते हैं।

आभासी शिक्षा पद्धति

कोविड-19 महामारी के समय शिक्षण संस्थानों के बंद हो जाने के कारण वर्चुअल मोड में पठन-पाठन कार्य अत्यंत लोकप्रिय हो गया। इससे ऑनलाइन माध्यमों एवं ऑनलाइन उपकरणों के प्रयोग को खूब बढ़ावा मिला। कोविड महामारी के कारण लगभग 02 वर्षों तक शिक्षण संस्थानों ने छात्रों को ऑनलाइन माध्यमों से बहुत ही सफल शिक्षण प्रदान किया।

आज घर बैठे आभासी शिक्षण से हम विभिन्न ज्ञान-विज्ञान से अवगत हो सकते हैं। साथ ही शिक्षा की निरंतरता बनाए रखने के लिए आभासी शिक्षण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्चुअल शिक्षण के अंतर्गत सभी पाठ्यक्रम पूरी तरह से ऑनलाइन माध्यम से संचालित किये जाते हैं, जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी के बीच की भौतिक दूरी मायने नहीं रखती है। ई-लर्निंग का तात्पर्य इलेक्ट्रॉनिक गजटों का उपयोग कर शिक्षा ग्रहण करना है, जिसमें किसी छात्र को किसी शिक्षक के सामने उपस्थित होने की आवश्यकता नहीं होती है। ई-लर्निंग शिक्षा का वह रूप है जिससे औपचारिक या अन्य प्रकार की शिक्षाएं इंट रनेट की टेलिमैटिक क्षमता का लाभ उठाकर कक्षा के बाहर या आंशिक रूप से कक्षा के बाहर संपन्न होती हैं। वर्चुअल शिक्षा वह शिक्षा है जिसमें शिक्षक और छात्र समय एवं स्थान द्वारा पृथक होकर भी वर्चुअल शिक्षण परिवेश में अध्ययन-अध्यापन करते हैं। गुरुकुल से एक लंबी यात्रा करते हुए हमारी शिक्षा व्यवस्था आज तकनीकी युग में आ पहुँची है, जहाँ पठन-पाठन के लिए स्कूली परिवेश की आवश्यकता गौण हो चुकी है और दूर बैठा शिक्षक समय की बंदिशों से मुक्त होकर अपने छात्रों से विभिन्न तकनीकी माध्यमों से संवाद स्थापित कर लेता है।

एल पी एस सी, वलियमला में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस समारोह

एल पी एस सी, वलियमला में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस समारोह

एल पी एस सी, बेंगलूरु में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस समारोह

अध्यक्ष, इसरो का आधिकारिक दौरा

स्वच्छता पखवाड़ा की झलकियाँ

सुधीर कुमार
सहायक
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

एक महान संतः रामानुजाचार्य जी

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 05 फरवरी 2022 को 'समानता की प्रतिमा' का अनावरण किया। यह प्रतिमा 11वीं सदी के भक्ति शाखा के संत श्री रामानुजाचार्य की स्मृति में बनाई गई है। 'स्टैच्यू ऑफ इक्वालिटी' को संत रामानुजाचार्य के जन्म के 1000 साल पूरे होने के उपलक्ष्य में बनाया गया है। प्रतिमा की ऊंचाई 216 फीट है।

रामानुजाचार्य जी का जीवन परिचय

हमारा देश भारत साधु-संतों की भूमि रही है। इस पवित्र भूमि ने कई संत-महात्माओं को जन्म दिया है। भारत की इसी पवित्र भूमि पर एक ऐसे ही महान् संत का जन्म हुआ, जिनका नाम था - "संत रामानुजाचार्य", जिन्होंने अपने अच्छे विचार एवं कर्मों द्वारा जीवन को सफल बनाया और कई सालों तक अन्य लोगों को भी धर्म की राह से जोड़ने का कार्य किया। रामानुजाचार्य को एक वैदिक दार्शनिक, संत और समाज सुधारक के रूप में भी जाना जाता है।

संत रामानुजाचार्य का जन्म सन् 1017 ई० में श्री पेरामबुदुर, तमिलनाडु में हुआ था। श्री रामानुजाचार्य के पिता का नाम केशव भट्ट था। जब श्री रामानुजाचार्य की अवस्था बहुत छोटी थी, तभी इनके पिता का देहावसान हो गया। इन्होंने कांची में यादव प्रकाश नामक गुरु से वेदाध्ययन किया। श्रीरामानुचार्य गृहस्थ थे, किंतु इन्होंने गार्हस्थ्य आश्रम को त्याग दिया और उन्होंने श्रीराम जाकर यतिराज नामक संन्यासी से सन्यास धर्म की दीक्षा ले ली।

रामानुजाचार्य ने समानता और समाजिक न्याय की वकालत करते हुए पूरे भारत की यात्रा की। रामानुजाचार्य ने वैदिक शास्त्रों पर कई भाष्यों की रचना की और नौ ग्रंथ लिखे, जिन्हें नवरत्न कहा जाता है। रामानुजाचार्य ने ईश्वर की भक्ति, करुणा, विनम्रता, समानता और आपसी सम्मान के माध्यम से सार्वभौमिक मोक्ष की बात की, जिसे "श्री वैष्णव संप्रदाय" के रूप में जाना जाता है।

रामानुजाचार्य सदियों पहले सभी वर्गों के लोगों के बीच अपने-आप को एक आदर्श व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किए। उन्होंने मंदिरों को समाज में जाति-भेद या वर्ग-भेद पर विचार किए बिना सभी के लिए अपने दरवाज़े खोलने के लिए प्रेरित किया ताकि सभी जाति-वर्ग के लोग मंदिरों में प्रवेश पा सकें। यह एक ऐसा समय था जब कई जातियों के लोगों को मंदिरों में प्रवेश की मनाही थी। रामानुजाचार्य ने शिक्षा को उन लोगों तक पहुँचाया जो इससे वंचित थे। रामानुजाचार्य का सबसे बड़ा योगदान यह है कि वे "वसुधैव कुटुम्बकम" की अवधारणा का पूरे संसार में प्रचार करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि - "पूरी धरती ही एक परिवार है।"

रामानुजाचार्य के प्रमुख संदेश

- अपने अंहकार को शांत करें।
- भगवान की सेवा के रूप में सभी प्राणियों की सेवा करें।
- समाज की सेवा करें जो ईश्वर का सार्वभौम रूप है।
- किसी का भी अपमान न करें।
- मन और कर्म की पवित्रता सबसे महत्वपूर्ण है।

रामानुजाचार्य के अनुसार, भक्ति का अर्थ पूजा-पाठ, कीर्तन-भजन नहीं, बल्कि ध्यान करना, ईश्वर की प्रार्थना करना है। आज के युग में भी रामानुजाचार्य की उपलब्धियाँ और उनके उपदेश समाज के लिए उपयोगी हैं तथा समाज को सन्मार्ग पर चलने का संदेश देते हैं।

होली की यादें

सूर्य मणि त्रिपाठी
वैज्ञा./इंजी एस जी
द्र.नो.प्र.कें.
वलियमला

बचपन की कुछ यादें हमेशा ऐसी मीठी होती हैं कि जीवन पर्यंत उन्हें हम यादों के झरोखों से निहारते रहते हैं। आज यहाँ पर मैं होली के महत्व या उसकी अच्छाई-बुराई नहीं बताने जा रहा बल्कि होली की उन यादों को समेटने की कोशिश कर रहा हूँ, उन पलों को चित्रित करने की कोशिश कर रहा हूँ, जिन्हें हम सभी ने विशेषकर उत्तर भारत के अधिकांश लोगों ने जिया है। वैसे तो आज के समय में होली का मतलब सर्वप्रथम होलिका दहन, फिर धूलेंदी एवं रंगबाजी तथा फिर स्वादिष्ट लज़ीज पकवानों की तैयारी से लगाया जाता है। पर यदि हम बचपन की यादों को कुरेदें तो होली का मतलब बहुत ही विस्तृत होता है। आजकल होली की वे तमाम बातें होती हैं कि नहीं यह जानने के लिए हमें उन परिस्थितियों में जाकर जीना पड़ेगा। जब हम होली शब्द सुनते हैं तो हमारे मन-मस्तिष्क में बहुत सारी यादें झंकृत हो उठती हैं। उनमें से कुछ का मैं उल्लेख करना चाहूँगा। इस पर्व की शुरुआत रबी की फसलों के पकने या यूँ कहें कि फसलों के तैयार होने की आहट से होती है। फाल्गुन के महीने में ठंडक अपनी शीतलता समेट रही होती है, बसंत ऋतु दस्तक दे रही होती है, तो मौसम बहुत ही सुखद एवं मनोरम हो जाता है। यही होता है - ऋतुओं के राजा बसंत के आगमन का संकेत। सब कुछ बहुत सुहाना एवं लुभावना लगता है, प्यार एवं समरता का द्योतक बसंत। सरसों के फूलों की छटा, हवा के झोंको से लहराते गेहूँ की बालियों का सुन्दर दृश्य, बागों में अमहर की मनहर महक, महुआ के फूलों का मादक रसीलापन, कोयल की कूक ये सब मिलकर प्रकृति की सुंदरता में चार चाँद लगा देते हैं। प्रकृति का रूप-वैभव अत्यंत मनमोहक और मनोहारी हो जाता है। ऐसी ही बसंत के सुहावने मौसम में होली का त्यौहार - मानों सोने पर सुहागा। इस पावन-पर्व के आगमन पर सबसे पहले गाँव की पूरब दिशा में एक नियत स्थान पर लकड़ियाँ, उपले तथा कुछ अन्य जलाने योग्य चीजें एकत्रित की जाती थीं, यदि यह कहा जाए कि इसमें मन का मैल भी, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगीं। इस दौरान कई शरारतें भी होती थीं। कुछ लोग कइयों की पुरानी खाटें, झोपड़ियाँ आदि भी उठा लाते और उन्हें होलिका-दहन में समर्पित कर देते। ज्यादातर ये भोली-भाली शरारतें लोगों को और सहज बनाने के लिए होती थीं। इसी क्रम में, दिन की मधुर धूप में लोगों के शरीर पर घरों में बने सरसों के उबटन मले जाते थे। ठंडियों में शरीर पर जमे मैल को उबटन से निकालकर इसकी कई अच्छी-अच्छी आकृतियाँ बनाई जाती थीं। फिर इन्हें सुखाकर होलिका-दहन के दिन के लिए रख लिया जाता था। होलिका-दहन फाल्गुन महीने के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी की शाम को किया जाता है। उस दिन शुभ मुहुर्त के अनुसार मंत्रोच्चारण के बाद होलिका-दहन किया जाता था। तदुपरांत लोग होलिका-दहन की आग में उबटन से बनी आकृतियों की आहुति दे देते थे। ऐसी मान्यता है कि यह बुराई पर अच्छाई की विजय का प्रतीक है। एक मान्यता यह भी है कि हिरण्यकश्यप की बहन होलिका भक्त प्रह्लाद को मारने के

लिए उसे गोद में लेकर आग में बैठ गई थी। परंतु श्री हरि की कृपा से भक्त प्रह्लाद को आग की लपटों की आँच तक नहीं आई। वहीं, बुराई की प्रतीक होलिका, जिसे आग में न जलने का वरदान प्राप्त था, जलकर राख हो गई। ये तो रही बातें मान्यताओं की। अब हम इससे आगे बढ़ते हैं। इसी होलिका की आग में कुछ लोग गेहूँ तथा जौ की नई-नई बालियों को भूनकर घर ले जाते थे तथा इन्हें प्रसाद के रूप में इष्ट-मित्रों को वितरित करते थे। पूरी रात के बाद प्रभात-काल में जब होलिका की आग ठंडी हो जाती थी, तो बाल-वृंद होलिका-दहन के स्थान से पात्रों में राख भरकर घर ले जाते थे। इसी राख को लोगों पर फेंका या लगाया जाता था। और इसे भी प्रसाद के रूप में घर के सदस्यों में वितरित किया जाता था। इसे शरारत के तौर पर भी फेंका जाता था। बच्चों को यह कार्यक्रम काफी प्रिय लगता था - दोस्तों के संग गाँव की गलियों में घूम-घूमकर धूल एवं राख से लोगों का स्नान कराना। यह कार्यक्रम सुबह के लगभग 10:00 बजे तक चलता था। इसी के साथ-साथ घरों में स्वादिष्ट पकवानों को बनाने का कार्यक्रम भी चलता था। स्वादिष्ट पकवान बनाने का जिम्मा अक्सर हमारी माताओं-बहनों के हाथों में होता था। कभी-कभी हम बच्चों को भी उनका हाथ बटाने का भरपूर मौका मिलता था। इन पकवानों में गुजिया होली पर्व का प्रतीक मानी जाती थी। एक घर की गुजिया दूसरे घर की गुजिया से प्रतिस्पर्धा करती थी कि कौन सबसे लज़ीज है। इसी समय हम बालकों को भी इन गुजिये-गुलगुलों पर हाथ साफ करने का अच्छा मौका रहता था। अब हम आते हैं, रंगबाजी पर, जिसकी शुरुआत धूलेंदी के बाद होती थी। धूलेंदी के बाद सभी लोग घर पर खुदे कुँओं की तरफ भागते थे और नहा-धोकर निकल जाते थे रंगों की होली खेलने। रंगों के खेल में लोग अक्सर एक-दूसरे को रंग और गुलाल लगाते थे। समय के साथ रंगबाजी में कुछ तो विकृतियाँ भी आ गईं।

कुछ लोग बहुत ही पक्के रंगों का प्रयोग करते थे, तो कुछ प्रयुक्त इंजन तेलों का, जो स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक साबित होते थे। रही बात बच्चों की, उनकी तो निकल ही पड़ी थी। बहुत से बच्चों को अपनी रचनात्मकता प्रदर्शित करने का अच्छा मौका मिलता था। अपने तथा अपने दोस्तों के लिए नरकट एवं बाँस की पिचकारियाँ बनाना, आलू के टप्पे बनाकर उससे लोगों के कपड़ों पर अलग-अलग चित्र उकेरना आदि जैसी कलाकृतियाँ बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुआ करती थीं। उस ज़माने में आज की तरह बनी पिचकारियाँ दुर्लभ हुआ करती थीं। उन दिनों स्टिल था पीतल की पिचकारियाँ मिलती थीं जो बेहद मँहगी होती थीं। कुछ ही लोगों के पास ये पिचकारियाँ होती थीं। इस रंग-बिरंगी दुनिया से बाहर निकलते-निकलते दिन का लगभग तीसरा पहर हो जाता था। इस कार्यक्रम के बाद लोग इष्ट-मित्रों के संग घरों में बने विशिष्ट पकवानों-व्यंजनों का आनंद लेकर होली-मिलन का कार्यक्रम शुरू करते थे। होली के लिए खरीदे गये नये-नये परिधानों में लोग समूह बनाकर ढोल-मजीरों के साथ एक-दूसरे के घर पहुँचकर फगुआ लोकगीत गाते हुए होली-मिलन करते थे। घर-घर लोगों का यथासंभव आतिथ्य-सत्कार किया जाता था। कुछ समय रूकने के बाद वे किसी दूसरे घर की ओर बढ़ जाते थे। यह सिलसिला यूँ ही चलता रहता था।

इसी दिन एक और महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम होता था जहाँ गाँव के पंडित को नया पंचांग भेंट किया जाता था। पुरोहित जी सभी को आशीर्वाद देकर पंचांग के अनुसार नव वर्ष के महत्त्वपूर्ण शुभ अवसरों यथा-शादी-विवाह के शुभ मुहुर्त, मानसून से बारिश की संभावनाओं तथा जनसामान्य के जीवन में नववर्ष की संभावनाओं एवं चुनौतियों के बारे में बताते थे। उस जमाने में सारी भविष्यवाणियाँ शायद ब्रह्म-वाक्य की तरह सही मानी जाती थीं। बहुत सारे लोगों के मन में भाँति-भाँति की धारणाएँ घर कर जाती थीं। होलिका इस वर्ष फलाँ की सवारी से आई है, तो इसका फलाँ प्रतिफल होगा। कोई कहता - होलिका इस वर्ष नाव से आई है, अतः इस वर्ष मूसलाधार बारिश की संभावना है। कोई कहता होलिका इस वर्ष पालकी से आई है, अतः इसका कुछ और प्रतिफल होगा। यदि उस वर्ष बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी तो लोग कहने लगते - पंडित जी ने सही बताया था कि इस बार होलिका अमूक सवारी से आई है, इसलिए यह स्थिति उत्पन्न हुई है। सही मायनों में कहा जाए तो उन दिनों होली के ये सभी क्रिया-कलाप आज अत्यंत विस्मयकारी एवं आनंदप्रद लगते हैं। इन सभी क्रिया-कलापों के साथ रात ढल जाती थी और लोग थककर इन मधुर यादों और इस होली के दौरान रही-सही कमियों को पूरा करने की उम्मीदों के साथ सो जाते थे।

होली के बारे में यह कहना ही होगा कि उन दिनों लोग अपने गिले-शिकवे, पुराने वैमनस्य भुलाकर जीवन में एक नये अध्याय की शुरुआत करते थे। तभी तो हम आज भी यह बोलते हैं - बुरा ना मानो होली है। हमारी मानें तो होली का यह संदेश हमेशा इसी तरह आगे बढ़ता रहेगा। सभी लोग ईर्ष्या-द्वेष, घृणा, मतभेद, जाति-भेद भुलाकर होली वाले प्यार के रंग में रंग जाएँगे। इसी से समाज में समरसता और भाईचारे का संचार होगा।

मेरी पहली बेंगलूरु यात्रा

यशवंत कुमार
तकनीशियन-बी
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

आज से लगभग 4 साल पहले की बात है, जब **"शिल्प अनुदेशक प्रशिक्षण योजना (सी आई टी एस)"** के तहत हमारा चयन "राष्ट्रीय कौशल संस्थान बेंगलूरु" में हुआ था। प्रवेश प्रक्रिया और प्रमाण-पत्र सत्यापन हेतु मैं अपने दो मित्रों के साथ 20 जुलाई 2018 को लखनऊ से बेंगलूरु के लिए रवाना हुआ। भारत की "सिलिकॉन वैली" के नाम से प्रसिद्ध शहर बेंगलूरु को देखने की जिज्ञासा प्रतिक्षण प्रबल होती जा रही थी। यह सफर बहुत ही सुहाना था। ट्रेन कभी मैदानों से, कभी हरे-भरे लहलहाते खेतों से, कभी घने और डरावने जंगलों से, कभी लंबी-लंबी शांत और अंधकार भरी गुफओं से और कभी ऊंचे-ऊंचे पर्वतों की वादियों से होकर गुजर रही थी। जब कभी बादलों का झुंड पहाड़ों के ऊपर से निकलता था तो उनके पीछे भागने का मन करता था। ये सभी प्राकृतिक दृश्य रोम-रोम को हर्षित करने वाले थे। 22 जुलाई शाम को हमने बेंगलूरु की धरती पर कदम रखा। घंटों बाजार की चहल-पहल देखने के बाद रात बिताने के लिए हमने एक कमरा किराए पर लिया। सुबह होते ही नाश्ता करके हम "राष्ट्रीय कौशल प्रशिक्षण संस्थान" पहुंच गए। पहली बार हम किसी इतने बड़े संस्थान में गए थे। वहां पर हमें कानपुर के कुछ वरिष्ठ प्रशिक्षार्थी मिले जिन्होंने हमें संपूर्ण प्रवेश प्रक्रिया को विस्तार में समझाया। पूरे दिन की मेहनत के बाद हम प्रमाण-पत्र सत्यापन और प्रवेश प्रक्रिया को पूरा करके घर वापस जाने के लिए यशवंतपुर रेलवे स्टेशन पहुंचे। प्लेटफॉर्म पर ट्रेन के आने की घोषणा हो रही थी। यात्रा के दौरान खाने-पीने के कुछ जरूरी सामान खरीद कर हम भी जल्दी से प्लेटफॉर्म पर पहुंच गए। ट्रेन आने का समय नजदीक ही था कि इतने में बारिश होने लगी। सभी लोग भागकर प्लेटफॉर्म के अंदर हो गए। इसी बीच ट्रेन सीटी देते हुए प्लेटफॉर्म के अंदर प्रवेश की। चूंकि हमें द्वितीय श्रेणी में यात्रा करनी थी, इसीलिए बैठने की जगह पाने के लिए हम ट्रेन के साथ दौड़ने लगे। बारिश के कारण फिसलन बहुत अधिक थी। किसी तरह मैं दौड़कर चलती हुई ट्रेन में चढ़ गया लेकिन हमारे एक मित्र इसी कोशिश में फिसल गए, वह प्लेटफॉर्म से नीचे रेल की पटरियों के बीच गिरने ही वाले थे कि हमारे दूसरे मित्र ने उनका बैग पकड़कर उन्हें पीछे खींच लिया। ईश्वर की कृपा से वे सही सलामत बच गए। ट्रेन रुकते ही हमने दौड़कर एक-दूसरे को गले लगाते हुए ईश्वर का धन्यावाद किया। आज भी जब कभी ट्रेन से सफर करना होता है तो **बेंगलूरु की पहली यात्रा** याद आते ही हृदय भर आता है।

कृष्ण चंद्र जोशी
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें.
वलियमला

कौन हूँ मैं

कौन हूँ मैं?, कहां हूँ मैं?, क्यों हूँ मैं?
कुछेक अस्थियों के ढाँचे में,
मांस के क्रमिक जाल का बुना हुआ।
कौन हूँ मैं?,

भौतिक, रासायनिक नियमों का बन्धा हुआ,
आर्थिक, समाजिक, नैतिक नियमों में बंधा हुआ,
आखिर कौन हूँ मैं और क्यों?

सभी तो मेरे जैसे हैं,
वहीं कुछ असीमित सोच के धनी,
कुछ मुझ से बलिष्ठ, गुणवान और सुंदर भी।
तो मैं फिर किस लिए?

ख़ुदा या भगवान या किसी और को रिझाने के लिए?
या फिर दुनिया भर की दौलत कमा लेने के लिए?
या ये मौका है किसी और अस्पृश्य, अदृश्य राहों को खोजने का
क्या इसलिये हूँ मैं?

नहीं, पर शायद हां भी, जो भी हो
पर ये सभी विचार ये तो मेरे हैं
ये संसार ये रचना किसी की भी हो ये दृश्य तो मेरे हैं
नहीं ये रचना भी मेरी है, मुझ जैसे सभी की
तभी तो इतनी विविधताओं, असंख्य आशंकाओं से भरी हुई।

शायद हम सभी रंगरेज़ हैं, हाथों में ब्रुश लिए,
नियमों में बंधे इन रंगों के डिब्बों के साथ,
इस बहुआयामी दुनिया के कैनवास में,
तैयार, उन्हीं नियमों के साथ अपना कुछ रच जाने को
मैं एक जनक हूँ, मैं एक रंगरेज़ भी हूँ
शायद मैं जान गया कि मैं कौन हूँ और क्यों?
या खोज अब भी जारी रहेगी.....

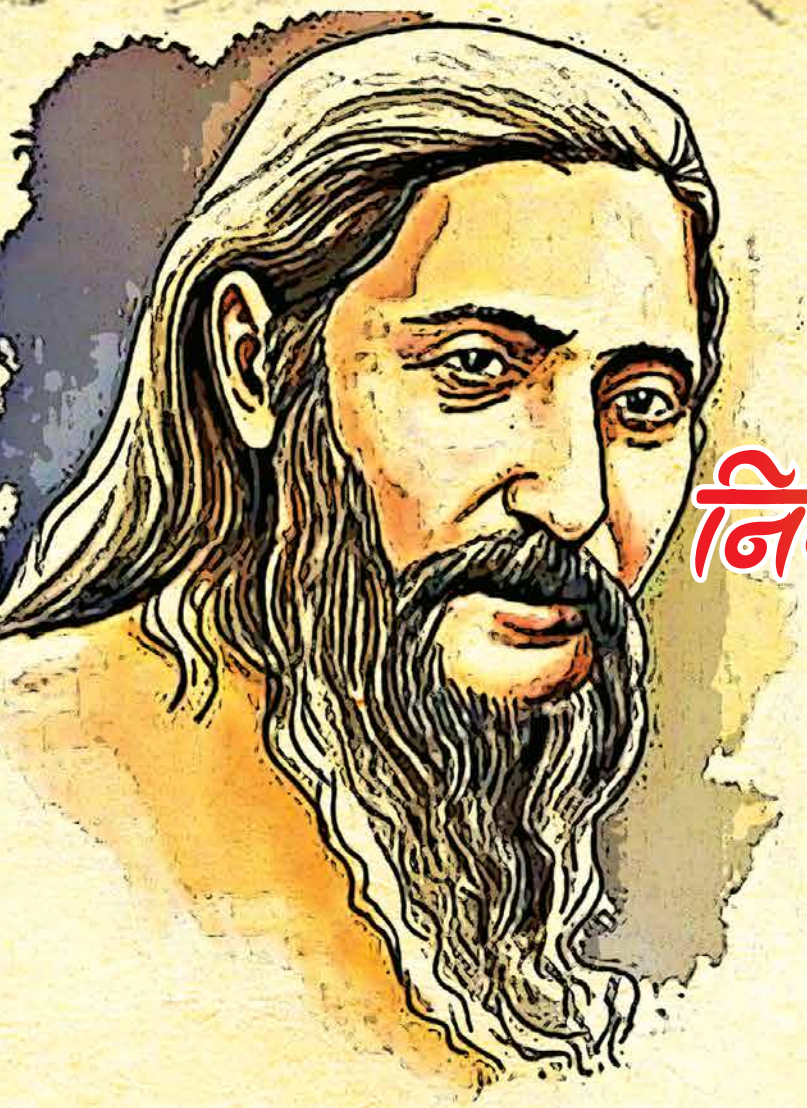

जितेन्द्र कुमार ठाकुर
तकनीकी सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

निराला का 'निरालापन'

छायावाद हिंदी साहित्य का एक महान कालखण्ड रहा है। इस युग में कई नवाचार हुए। इसके प्रमुख चार स्तंभ-कवि हैं - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत तथा महादेवी वर्मा। यूँ तो सभी कवि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं किंतु निराला अपने निरालापन के कारण बाकियों से कहीं आगे नजर आते हैं।

निराला का जन्म सन् 21 फरवरी 1896 ई० को पश्चिम बंगाल के मिदनापुर (मेदिनीपुर) में हुआ था। उनकी आरंभिक शिक्षा बंगला माध्यम में हुई। पंद्रह वर्ष की आयु में उनका विवाह मनोहरा देवी से हुआ। उन्होंने हिंदी अपनी पत्नी के अनुरोध पर सीखा। आश्चर्य की बात यह है कि बीस वर्ष की आयु में उन्होंने हिंदी पढ़ना-लिखना सीखा और फिर भी वे अपना नाम हिंदी के सर्वश्रेष्ठ कवियों में लिखवा गये। निराला का जीवन संघर्ष भरा रहा। वे अपने निजी तथा साहित्यिक जीवन में लगातार संघर्ष करते रहे। जब वे बाइस वर्ष के थे तो उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई। साहित्य जगत में भी उनको समालोचकों से लगातार प्रतिक्रियाएँ झेलनी पड़ीं। हालत यह था कि इतना अच्छा कवि होने के बावजूद वे अपनी बेटी का इलाज करवाने में सक्षम नहीं थे। अंततः सत्रह वर्ष की आयु में उनकी बेटी सरोज भी उन्हें छोड़ इस दुनिया से चल बसी। इस घटना से निराला को गहरा आघात पहुँचा, किंतु निराला हमेशा की तरह कभी टूटे नहीं, झुके नहीं, सदा खड़े रहे। उनका आत्मसंघर्ष उनकी कविताओं में भी दिखाई देता है।

निराला ने कई कालजयी रचनाएँ की। उनकी प्रमुख कविताओं में 'जुही की कली', 'जागो फिर एक बार', 'सरोज स्मृति', 'राम की शक्ति पूजा', 'तुलसीदास', 'तोड़ती पत्थर', कुकुरमुत्ता आदि हैं। निराला प्रेम के कवि थे तो विद्रोह के भी, वे परंपरा में विश्वास करते थे तो वहीं वे मुक्ति के कवि भी थे। उनके लिए मनुष्य की मुक्ति जितना महत्व रखती थी उतना ही कविता की मुक्ति भी। मनुष्य की मुक्ति वे प्राचीन रूढ़ियों से चाहते थे और कविता की मुक्ति छंदों से। रूढ़ियों से मुक्ति का संघर्ष उनके जीवन की दो घटनाओं से पता लगता है। पहला उनकी जन्म-कुण्डली में दो शादियों का योग लिखा था। किंतु 22 वर्ष की आयु में पत्नी की मृत्यु के बाद भी उन्होंने दूसरी शादी न करके कुण्डली को झूठा साबित किया। दूसरी घट ना उनकी बेटी सरोज के विवाह के समय का है। जब दूल्हे के सर पर रखने क लिए मोर नहीं था तो उन्होंने नवाचार का परिचय देते हुए रामचरितमानस को सर पर रख दिया। उनका

यह नवाचार उनकी कविताओं में भी देखने को मिलता है। जब उन्होंने 'जुही की कली' की रचना मुक्तक छंद में की तो साहित्य जगत के आलोचकों के गले नहीं उतरी।

"विजन वन वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी
स्नेह-स्वप्न-मग्न-अमल-कोमल-तनु-तरुणी
जुही की कली"

निराला ने अपनी बेटी सरोज की याद में लम्बी कविता सरोज-स्मृति की रचना की। यह हिंदी साहित्य की पहली शोकगीति (एलेजी) साबित हुई। उन्होंने अपनी पुत्री का तर्पण अपने कर्मों के अर्पण के द्वारा किया।

"दुःख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ जो आज नहीं कही।"

"इस पथ पर, मेरे कार्य सकल, हों भ्रष्ट शीत के-से शतदल।
कन्ये, गत कर्मों का अर्पण कर, करता मैं तेरा तर्पण।"

निराला को साहित्य जगत में निराला बनाने का काम किया उनकी कालजयी रचना "राम की शक्ति पूजा" ने। यह रचना अपने समय के बंधनों को तोड़ते हुए सार्वकालिक हो चुकी है। इसकी पंक्तियाँ आज भी निराश मनुष्य को ऊर्जा से भर देती हैं। इसमें राम का संघर्ष मानों हर मनुष्य के भीतर स्वंय का संघर्ष है।

"स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर-फिर संशय
रह-रह उठता जग-जीवन में रावण-जय-भय"

"रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त
तो निश्चय तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त"

"सिहरा तन, क्षण-भर भूला मन, लहरा समस्त,
हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त,
फूटी स्मिति सीता ध्यान-लीन राम के अधर,
फिर विश्व-विजय-भावना हृदय में आई भर।"

निराला जब विद्रोह के लिए आवाज़ उठाते हैं तो सीधे कहते हैं - "तोड़ो-तोड़ो-तोड़ो कारा, निकले फिर गंगाजल धारा।" निराला अपने अक्खड़ व्यक्तित्व के कारण विद्रोह के पर्याय बन गए। यह निराला की महत्ता ही है जो कुकुरमुत्ता (मशरूम) को गुलाब से लड़ाता है। यहाँ गुलाब को समृद्ध पूंजीपति तथा कुकुरमुत्ते को गरीब किसान-मजदूर बताया गया है।

"अबे, सुन बे, गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू, रंगोआब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतराता है कैपिटलिस्ट।

शाहों, राजों, अमीरों का रहा प्यारा
तभी साधारणों से तू रहा न्यारा।"

कभी न झुकने वाला, कभी न रूकने वाला, कभी न टूट ने वाल यह कवि भी आखिर जिंदगी के संघर्षों से थक जाता है। अंतिम क्षणों में निराला एकदम अकेले हो जाते हैं। अपने समय से अकेला टकराने वाला व्यक्ति, विद्रोह का पर्याय, प्रेम और प्रकृति का उपासक यह कवि जीवन के अंतिम पड़ाव में लिखने लगता है-

"स्नेह निर्झर बह गया है,
रेत ज्यों तन रह गया है।"

"आग सारी फूँक चुकी है,
रागिनी वह रूक चुकी है।"

"मैं अकेला
देखता हूँ, आ रही
मेरे दिवस की सांध्य बेला।"

हिंदी के महान कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का इस दयनीय स्थिति में पहुँच जाना किसी को भी दुखित कर देगा। आज हिंदी का कोई ऐसा पाठ्यक्रम नहीं है जहाँ निराला की रचना न पढ़ाई जाती हो। निराला का जीवन-संघर्ष हमें कठिनाइयों से लड़ने की प्रेरणा देता है, साथ ही यह सीख भी देता है कि महान व्यक्ति को उनके जीवन-काल में भी सम्मान मिलना चाहिए। एक बार महात्मा गाँधी ने किसी कार्यक्रम में जब यह कह दिया था कि समकालीन हिंदी में तुलसीदास और रविन्द्रनाथ टैगोर-जैसे रचनाकार नहीं हैं तो निराला ने तुरंत जवाब देते हुए कहा था कि पहले आप हिंदी की रचनाएँ पढ़िये तो सही। ऐसे साहसी और विराट व्यक्तित्व के धनी निराला सन् 15 अक्तूबर 1961 को प्रयागराज में दुनिया को अलविदा कह गये। वे ठीक ही कहा करते थे कि मेरी मृत्यु के बाद लोग याद करेंगे कि मेरा महत्व क्या था। उनका ये शेर आज शत-प्रतिशत सत्य हो रहा है।

"पसे मर्गन समझ में आएँगे ये कौन हमदम थे,
समर औ' गुल रिवजाँ में, गर्मियों में आब-ए-ज़मज़म थे।"

अभिमन्यु कुमार
हिंदी टंकक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

बंधन

इस संसार का जब से सृजन हुआ है, तभी से **बंधन** शब्द का भी सृजन हुआ है। प्राकृतिक, भौगोलिक, रासायनिक तथा भौतिक दृष्टिकोणों से यह संपूर्ण जगत बंधनों में बंधा हुआ है। उक्त में से किसी एक भी क्रिया का संतुलन बिगड़ने से इस संसार में विभिन्न प्रकार के हलचल तथा उतार-चढ़ाव दृष्टिगोचर होने लगते हैं। पूरे ब्रह्माण्ड का संतुलन बनाए रखने के लिए कई बंधन क्रियाशील रहते हैं, जिनका अनुसंधान हमारे वैज्ञानिकों व खगोल शास्त्रियों द्वारा अब तक किया जा रहा है।

बंधन की बात जब हम जीव-जगत के परिप्रेक्ष्य में करते हैं तो बंधन एक शब्द नहीं है, बल्कि यह विश्वास, एकता, एहसास, सद्भाव, प्रेम एवं आत्मीयता का प्रतीक है, जिसकी गहराई शब्दों में बयाँ नहीं की जा सकती। बंधन की अनुभूति मनुष्य से लेकर पृथ्वी पर विद्यमान सभी प्राणियों द्वारा की जाती है। बंधन एवं एकात्मकता दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। बंधन को हम जीवन के किसी भी पहलू से जोड़ सकते हैं। चाहे इंसान हो, जानवर हो, स्थान हो अथवा चाहे कोई निर्जीव वस्तु ही क्यों न हो, वे सभी किसी न किसी बंधन में बंधे होते हैं।

आज हम 21वीं सदी में जी रहें हैं। हम यह भली-भाँति जानते हैं कि वर्तमान में इंसान का इंसान के साथ कितना गहरा संबंध है या उनके बीच संबंधो की डोर कितनी मजबूत है। व्यक्तिगत जीवन के बंधनों से ऊपर उठकर यदि हम समाज, राज्य अथवा राष्ट्र के साथ अपने बंधनों की बाते करते हैं तो हम सभी एकता के सूत्र में बंध जाते हैं। राष्ट्र के साथ हमारा बंधन हमारे अंदर देश और समाज के प्रति समर्पण का भाव उत्पन्न करता है। आज हम आज़ादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं। यही देश 74 वर्ष पहले परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। परतंत्रता की इन बेड़ियों को काटने के लिए लाखों भारतीय देशभक्ति एवं देश-प्रेम के अटूट बंधनों में बंधे तथा उन्होंने लंबे संघर्ष के बाद देश से ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़ फेंका। जब देश स्वतंत्र हुआ यह 562 छोटे-बड़े रियासतों में विभक्त था। उस वक्त सबसे बड़ी चुनौती थी इन सभी रियासतों को एक सूत्र में पिरोकर भारत राष्ट्र का निर्माण। सरदार वल्लभ भाई पटेल की सूझ-बूझ का नतीजा था कि इन रियासतों का भारत में विलय हो सका और लोगों के बीच स्थापित एकता के भाव या अटूट बंधनों से विशाल भारत देश का उदय हुआ। लेकिन आज़ादी के बाद से लोगों के बीच एकता का भाव कहीं तिरोहित होता जा रहा है। जब हम समाज पर नज़र डालते हैं तो यह ज्ञात होता है कि हम किसी-न-किसी तरह से सामाजिक परिदृश्य में एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। परिवार के सदस्यों के बीच भी अटूट बंधनों का दीदार होता है। समाज और परिवार के सदस्यों के

बीच एकात्मकता और आपसी सौहार्दपूर्ण संबंध सदियों से चला आ रहा है और वर्तमान में भी इनका महत्त्व सर्वोपरि है। किसी भी कार्य को लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए यह आवश्यक है कि हम सभी एकजुट होकर उस कार्य में निष्ठा और तन्मयता से लगें। हम समाज में कई जातिगत, भाषागत, क्षेत्रीय एवं धार्मिक समूहों को देखते हैं और प्रत्येक समूह के सदस्यों के बीच अटूट बंधन देखे जाते हैं। लेकिन इस प्रकार के जातिगत, भाषागत, क्षेत्राधारित एवं धर्माधारित बंधन समाज को भिन्न-भिन्न वर्गों में बाँट देते हैं, समाज में वर्ग-विभेद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। आज आवश्यकता यह है कि ये पहचान-आधारित बंधन हमेशा-हमेशा के लिए टूटें तथा मनुष्य-मनुष्य के बीच गहरा रिश्ता स्थापित हो, जो प्रेम, स्नेह सद्भाव, ममता, सौहार्द तथा एक-दूसरे के सत्कार-सम्मान पर आधारित हो।

आज विकास की दौर में, बदलते हुए सामाजिक, प्राकृतिक एवं वैश्विक परिवेश में मनुष्य संघर्षरत है। वह किन्हीं संकीर्ण समूहों में बंधकर प्रगति की राह तय नहीं कर सकता, आजिविका अर्जित नहीं कर सकता, उच्च शिक्षा-ज्ञान हासिल नहीं कर सकता। इसलिए मनुष्य अपने लक्ष्यों को पाने एवं अपनी मनोकामनाओं को पूरा करने के लिए एक देश से दूसरे देश, एक राज्य से दूसरे राज्य तथा गाँव से शहर की ओर रूख करता है। वह प्रवास के दौरान बचपन से अर्जित ज्ञान एवं गुणों का उपयोग कर जीवन-पथ पर लक्ष्यों को पाने के लिए अग्रसर होता है। नये स्थान पर वह नये बंधनों में बंधने के लिए आकुल होता है, वह चाहता है कि उसे कोई मनमीत, हमराह या हमजोली मिले, जिससे वह अपनी सुख-दुख की अनुभूतियों को साझा कर सके। वह नये बंधनों में खुशियों की तलाश करना चाहता है, जीवन को सुखमय बनाना चाहता है। यह भी देखा गया है कि जब मनुष्य किसी बंधन में यह महसूस करता है कि उसका विचार उसके साथी के विचार से नहीं मिलता है तो वह कूटनीति का सहारा लेता है। कूटनीति का सहारा मनुष्य की विवशता को दर्शाता है। जिन संबंधों में कूटनीति का समावेश हो जाता है, उनमें मिठास की कमी हो जाती है। उस बंधन को हृदय से निभाते नहीं हैं, बल्कि बोझ समझकर ढोते हैं। व्यक्ति ज्ञान-शिक्षा कितनी ही हासिल कर ले यदि वह संबंधों का सम्मान नहीं करता है, बंधनों को एक झटके में तोड़ देता है तो वह एक सच्चा मनुष्य कहलाने के योग्य नहीं होता।

रहीम कवि के शब्दों में...

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाए।
टूटे तो फिर ना जुड़ै, जुड़ै तो गाँठ पर जाए।।

रंजिनी आर वी
वरिष्ठ सहायक
द्र.नो.प्र.कें. वलियमला

मेरा जीवन

मेरा जीवन कितना सुंदर
सुख-दुःख का मेल है वो
पहले भूमि पर आया था
शिशु के रूप में रो-रोकर
खेल-खेलकर दौड़-दौड़कर
बचपन निकल गया
स्कूल में पढ़-पढ़कर आगे बढ़ा
युवक बना तो कॉलेज में भर्ती
अपने सुंदर सपनों का साक्षात्कार
शादी हुई पिता बना
जीवन संतोषमय फिर हुआ
धीरे-धीरे सुख-दुःख के अनुभव मिले
सब विघ्नों को तोड़ते-तोड़ते
पहुँचे बुढ़ापे की स्थिति में
फिर शांति से परलोक वास हुए।

कर्नाटक के दर्शनीय स्थल

वारुणि एस
सुपुत्री श्री सत्यनारायणा एम एम
वरि. लेखा अधिकारी,
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

कर्नाटक राज्य आकर्षक पर्यटन स्थलों के लिए जाना जता है। यहाँ अनगिनत दर्शनीय स्थल हैं। इस राज्य की भाषा कन्नड़ है। इस राज्य के पश्चिम में पश्चिमी घाट की पहाड़ियाँ है, जिनकी छटा देखते ही बनती है। कर्नाटक राज्य का नैसर्गिक सौंदर्य जंगलों, कॉफी बागानों, झीलों, जलप्रपातों, पहाड़ियों आदि से परिपूर्ण है और यह पर्यटकों एवं यात्रियों के लिए अत्यंत मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करता है। यह राज्य ऐतिहासिक धरोहरों एवं स्मारकों के लिए भी विख्यात है। इस प्रकार, कर्नाटक राज्य का नैसर्गिक सौंदर्य एवं ऐतिहासिक महत्त्व पर्यटकों को लुभाता है और वे यात्रा पर अनायास खींचे चले आते हैं। प्राकृतिक छटा बिखेरते एवं पुरातन कला एवं संस्कृति को संजोए कुछ रमणीय स्थलों की जानकारी निम्नवत है।

हंपी

हंपी, यूनेस्को द्वारा घोषित विश्व के विख्यात स्थलों में से एक है। तुंग-भद्रा के तट पर स्थित यह ऐतिहासिक स्थल, विजयनगर साम्राज्य की प्रतिष्ठा की झलक देती है। यहाँ पत्थर पर की गई नक्काशियाँ पुराने जमाने के कारीगरों की कुशलता और निपुणता के प्रमाण हैं। यह एक उपयुक्त पर्यटन स्थल है। यहां का विजयवट्ठल मंदिर, विरुपाक्ष मंदिर और मातंगा हिल मन को शांति प्रदान करता है।

हलेबीडु

कर्नाटक के हासन जिले में स्थित हलेबीडु, अपने होयसला वास्तुकला, शानदार मंदिरों के लिए जाना जाता है। हलेबीडु, भारतीय वास्तुकला के रत्न के नाम से भी जाना जाता है।

मैसूर

मैसूर, अपने खूबसूरत महलों के कारण महलों के शहर के नाम से प्रसिद्ध है। मैसूर महल, को यूनेस्को की मान्यता प्राप्त है। प्रति वर्ष दशहरा का उत्सव यहां धूम-धाम से दस दिनों के लिए मनाया जाता है।

उडुपी

उडुपी कर्नाटक का एक तटीय स्थल है जो देशभर में शाकाहारी व्यंजनों के लिए लोकप्रिय है। यह स्थान नक्काशीदार प्राचीन मंदिरों, शांत समुद्र तट, सुनसान हरे-भरे जंगलों से परिपूर्ण है। मणिपाल का प्रसिद्ध शैक्षिक केंद्र भी यहीं पर स्थित है। यहां का सबसे महत्वपूर्ण आकर्षण यहां का कृष्ण मंदिर ही है। उडुपी, स्थानीय लोगों के बीच रजत पीठ और शिवल्ली के नाम से भी विख्यात है।

जोग जलप्रात

मन को हरने वाले असीम सौंदर्य से युक्त जोग जलप्रपात का नज़ारा प्रकृति की सुंदर रचना का जीता-जागता सबूत है। जमीन से लगभग 850 फीट की ऊंचाई से गिरने वाला यह जलप्रपात, भारत का दूसरा सबसे ऊँचा जलप्रपात है।

बेंगलूरु

भारत की सिलिकॉन वैली के तौर पर ख्याति प्राप्त बेंगलूरु, भारत का तीसरा बड़ा शहर है। बेंगलूरु अपने सुहावने मौसम, खूबसूरत उद्यान और झीलों के लिए पसंद किया जाता है। बेंगलूरु अपने भोजनालयों और स्वादिष्ट स्ट्रीट भोजनों के लिए भी जाना जाता है। बेंगलूरु में घूमने के लिए कई जगहें हैं - जैसे, कब्बन पार्क, लाल-बाग, बन्नेरघट्टा उद्यान, इस्कॉन मंदिर इत्यादि। इसके अलावा कुर्ग, शिवसमुद्रम जलप्रपात, गोकर्ण, दादेली, नंदी हिल्स, चित्रदुर्ग किला, बिजापुर, चिकमंगलूर - जैसे अन्य लुभावने स्थान भी हैं।

बेंगलूरु के सौंदर्य को शब्दों में व्यक्त करना असंभव है, इस मिट्टी के सौंदर्य का अनुभव करने के लिए हर व्यक्ति को कम-से-कम एक बार तो यहाँ आना ही चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यहां की प्रत्येक जगह आपके मन को हर लेगी।

मैं भी चल पड़ा

अरुण कुमार
तकनीकी सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

उगते सूरज की योजना में शामिल,
ये सारा संसार निकल पड़ा,
तो मैं भी चल पड़ा।

बचपन में लड़खड़ाते कदमों ने गिराया तो बहुत,
मिला माँ का सहारा तो संभल पड़ा।

हुए संभलते कदम, लिए चंचलता भरा मन,
मिला अपनों-सा यारों का संग,
तो घर के चौखट से निकल पड़ा।

प्रकृति की निरंतरता के नियम में,
बाधाओं का अस्तित्व क्यों आया?
जब चल पड़े ही थे तो,
गिरने का पल क्यों आया?

आखिर मिले जीवन के कुछ सीख,
तो दृढ़ निश्चय कर फिर से चल पड़ा।

बेहतर भविष्य ओर उन्मुख,
हुआ घर के आंगन से विमुख
घर बनाने को घर से ही निकल पड़ा।

इस अनिश्चितता पूर्ण जीवन में,
क्या पड़ाव क्या ठहराव,
हुआ वास्तविकता का आभास,
तो फिर से चल पड़ा।

श्रीमती दीपशिखा
पत्नी श्री राजीव वर्मा
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

ऐसा हुआ मजाक

हर सुबह सूरज की नई सुनहरी किरणों के साथ मुझे देश का नया रूप और सुनहरा भविष्य देखने का मौका मिलता है। जी हाँ, मैं एक शिक्षिका हूँ और इसी नाते मुझे नए सुनहरे भविष्य के साथ-साथ उसमें आने वाली रुकावटों और ऊँची उड़ान में आने वाली बेड़ियों के एहसास से डर लगा रहता है। यह डर मुझे ही नहीं, बल्कि आप सभी को भी लगा रहता होगा। आज या कल अपनों या परायों के साथ आप सभी ने यह अनुभूति कभी-न-कभी जरूर की होगी और शायद जाने-अनजाने में करवाई भी होगी, जैसा कि मेरी कहानी के शीर्षक से जाहिर होता है...

मैं हाल-फिलहाल में हुई एक सच्ची घटना के साथ इसे समझाते हुए आप सभी के साथ साझा करना चाहूँगी और साथ ही यह उम्मीद करती हूँ कि आप भी बेहतर भविष्य में इस सच्ची घटना को जानने के बाद अपनी समझ के अनुसार जितना हो सके, बदलाव लाने का प्रयत्न करेंगे।

बात कक्षा सातवीं की है। मैं कलाकार हूँ और अपनी कला की कक्षा में सभी को कला में तराशने के साथ-साथ व्यवहार-कुशलता की कला सिखाने का कार्य कर रही थी। इसी दरम्यान दो बच्चों का ध्यान बार-बार भटक रहा था। मैं उनको पता चले बिना कि मैं उनकी हरकतों पर नज़र रखी हुई हूँ, उनके पास गई और उस हलचल को समझ कर श्यामपट्ट के पास वापस चली आई। मेरे आने के कुछ पल बाद ही एक बच्चा मायूस और उदास चेहरा लेकर बड़ी ही नाउम्मीदी के साथ मेरे पास आया और बोला "मैडम इसने मेरी कला की कॉपी के सर्टिफिकेट पर E+ ग्रेड लिख दिया है" और थोड़ी देर पहले मैं बच्चों को ग्रेड ही समझा रही थी कि अंतिम ग्रेड D है और E का मतलब फेल होता है।

फिर क्या था, मैंने तुरंत ही दूसरे बच्चे को बुलाया और कला की कॉपी भी मंगवाई। पहले से दोनों की हरकतें तो मैं जान चुकी थी, इसलिए बिना देर किए मैंने दूसरे बच्चे से पूछा, "ऐसा क्यों किया आपने?" उसने फौरन 'ना' में उत्तर दिया जैसे उसने कुछ किया ही ना हो और इतनी भोली शक्ल पर मैं भी विश्वास कर लेती कि शायद कुछ धोखा हुआ होगा, किंतु मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा था और बच्चा अपनी गलती स्वीकार ही नहीं कर रहा था। यह पहली बार नहीं हुआ था। नया था तो यह कि मैंने स्वयं देख कर इस पर थोड़ा रुककर विचार और अध्ययन किया, अन्यथा मैं समय से पहले ही कूद पड़ती, तो सही और गलत के बीच में इससे उस वक्त का मामला तो सही हो जाता। पर, बच्चे को इसका कोई खास एहसास नहीं होता, उसे फर्क नहीं पड़ता। जब बच्चे ने अपनी गलती स्वीकार नहीं की, तब उसकी आँखों में आँखें डालकर उससे प्यार से पूछा, "सच-सच बताओ, ऐसा क्यों किया?" वह समझ चुका था कि उसका झूठ पकड़ा गया है फिर वह थोड़ा सा पिघला और पलकें झुकाकर बोला, "मैडम, मैं तो बस मज़ाक कर रहा था।" ...मजाक... फिर क्या था, मेरे आँखों के सामने कई तस्वीरों, ज़िंदगी की कई पहलुओं और ना जाने कितनी ही ऐसी घटनाओं की ढेर लग गई, तब तक पहले बच्चे ने बोला, "नहीं मैडम, इसने जानबूझ कर किया है।" मैं मना कर रही थी, फिर भी दोनों आपस में बहस पर उतर आए थे और इसी के साथ मैं भी अतीत की उन बातों से वर्तमान में चली आई और देखी की बच्चे को अपनी गलती का एहसास हो रहा था, उसकी आँखों से अश्रुधारा बहने ही वाली थी कि मैंने उसे नज़र-अंदाज कर दिया ताकि उसे इस आत्मग्लानि से निकलने का मौका मिल सके। मेरा अगला सवाल, जो केवल उस दूसरे बच्चे से नहीं बल्कि पूरी कक्षा से था, मैंने सभी को

संबोधित करते हुए पूछा और यह सवाल आप सभी पाठकों से भी है कि क्यों...? ... क्यों उसने मज़ाक का रूप **E+** में ही दिया? वह चाहता तो **A+A*** भी देकर मज़ाक बयां कर सकता था। क्यों हम सभी अपनी भड़ास, अपनी जलन को स्वीकार करके उसे समझ कर उसे दिशा देने के बजाय यह मज़ाक के रूप में परोसते हैं और उम्मीद करते हैं कि सामने वाला यह परोसा हुआ मज़ाक-रूपी व्यंजन का लुत्फ़ उठाएगा। क्यों ऐसा मज़ाक करके सामने वाले की खिल्ली उड़ाई जाती है, जबकि खिल्ली तो स्वयं मज़ाक करने वाले की उड़ रही होती है। मज़ाक करने वाले के मज़ाक के साथ-साथ उड़ रही होती है, उसकी गरिमा, मान-सम्मान, प्रतिष्ठा और इन सबसे बढ़कर मानवता।

क्या इतने सभ्य समाज का हिस्सा बनकर भी हम अपनी पीढ़ी को मज़ाक बना देना चाहते हैं? क्या उनको भेंट-स्वरूप हम यह मज़ाक देना चाहते हैं? क्या शब्द एवं वाक्य इतने कम पड़ जाते हैं कि हमें अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए ऐसी ओछी हरकतों और भद्दे तरीकों का सहारा लेना पड़ता है? क्या पीढ़ियों से विकसित 64 कलाएं भी कम पड़ जाती हैं, अपनी अभिव्यक्ति के लिए... या जानबूझ कर, इस भाग-दौड़ भरी दुनिया का हिस्सा बनने के बाद हम सब ऐसे मज़ाक का हिस्सा बनना पसंद करने लगे हैं? बुद्धिमान कहलाते-कहलाते, हम बुद्धिहीनों वाली ऐसी हरकतें करने लगे हैं।

क्या जीवन में सुकून तलाशना इतना मुश्किल हो गया है कि किसी को नीचा दिखा कर, उसका अपमान करके या अपनी दमित इच्छाओं को मज़ाक-रूपी वस्त्र पहनाकर सुकून तलाशने लगे हैं? क्या हमने अपनी इन नंगी इच्छाओं को वस्त्र पहनाने-जैसा बढ़िया काम किया है और औरों के सामने अपने भद्दे रूप को वस्त्र में लपेटकर लाए हैं?

क्या इस तरह के मज़ाकिया लहजे का प्रयास हमारे जीवन के आयाम का एक बेहतर हिस्सा बन सकता है? इन सभी हालातों के दरम्यान आपने यह महसूस किया होगा कि आप जितना सरल रहते हैं और आप जितनी ही सरलता का संचार दूसरों में करते हैं, आप भीतर से उतना ही सरल और सुलझा महसूस करते हैं। यह सरलता आपके जीवन के हर मोड़ पर आपका साथ देती है। अतः यह कहना भी सही होगा कि जीवन के बाद भी यह सरलता आपको जीवंत रखती है।

तकनीकी शब्दावली वर्ग पहेली

रंजिनी आर वी
वरिष्ठ सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

1				8
2				
9	3			
4				
5	11	12	13	10
6		7		

ऊपर से नीचे की ओर (हिंदी में)

8. **conductivity**
9. **decoherence**
10. **soap**
11. **friction**
12. **flexible**
13. **temperature**

बाएँ से दाएँ की ओर (हिंदी में)

1. **Fusion (4)**
2. **definition (4)**
3. **auxiliary (4)**
4. **corrosivity (5)**
5. **density (4)**
6. **quality (2)**
7. **energy (2)**

उत्तर

1 सं	ग	ल	न	8 चा
2 प	रि	भा	षा	ल
9 अ	3 स	हा	य	क
4 सं	क्षा	र	क	ता
5 स	11 घ	12 न	13 ता	10 सा
क्ति	र्ष	म्य	प	बु
6 गु	ण	7 ऊ	र्जा	न

गोलघर

रविंद्र कुमार
पति-कुमारी शालू
हिंदी टंकक
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

गोलघर बिहार के पटना शहर में स्थित है। इसलिए इसे पटना का गोलघर के नाम से भी जाना जाता है। यह एक ऐतिहासिक धरोहर है। पटना के पर्यटन के प्रमुख आकर्षणों में से गोलघर सर्वोपरि है। इसे बिहार की शान और पटना की पहचान कहा जाता है। यह पटना के पश्चिमी किनारे पर गाँधी मैदान के समीप स्थित है। 20 जुलाई 2021 को यह गोलघर 253 साल का हो गया।

इसे सन् 1979 में राज्य संरक्षित स्मारक घोषित किया गया था। आज यह ऐतिहासिक इमारत एक पर्यटन स्थल बन गई है।

क्यों बनाया गया गोलघर?

बिहार के गौरवशाली इतिहास और आधुनिक पटना की पहचान बने 'गोलघर' का निर्माण 1786 में करवाया गया था। वर्ष 1770 में भंयकर सूखे से लगभग एक करोड़ लोग भुखमरी के शिकार हुए थे। तब तत्कालीन गवर्नर जनरल वॉरेन हेस्टिंग्स ने अनाज के भंडारण के लिए गोलघर निर्माण की योजना बनाई थी। ब्रिटिश इंजीनियर कप्तान जॉन गार्स्टिन ने अनाज के भंडारण के लिए गोल ढांचे का निर्माण 20 जनवरी 1784 को शुरू किया। ब्रिटिश फौज के लिए इसमें अनाज सुरक्षित रखने की योजना थी। इसका निर्माण-कार्य ब्रिटिश राज में 20 जुलाई 1786 को पूरा हुआ। इसमें एक साथ 1,40,000 टन अनाज रखने की क्षमता है।

गोलघर की संरचना

गोलघर की गोलाकार इमारत अपनी ख़ास आकृति के लिए प्रसिद्ध है। इसके चारों तरफ घुमावदार 145 सीढ़ियाँ बनी हुई हैं, जिनके सहारे यहाँ आने वाले पर्यटक नीचे से इसके ऊपरी सिरे तक जा सकते हैं। उसके ऊपर चढ़कर पास ही बहने वाली गंगा नदी, इसके परिवेश और पटना शहर के एक बड़े भाग का शानदार अवलोकन संभव है। गुम्बदाकार आकृति के कारण इसकी तुलना 1627-55 में बने मोहम्मद आदिल शाह के मकबरे से की जाती है। गोलघर के अंदर एक आवाज 27-32 बार प्रतिध्वनित होती है, जो अपने-आप में अद्वितीय है।

इस इमारत की ऊंचाई 29 मीटर (96 फीट) है, जबकि

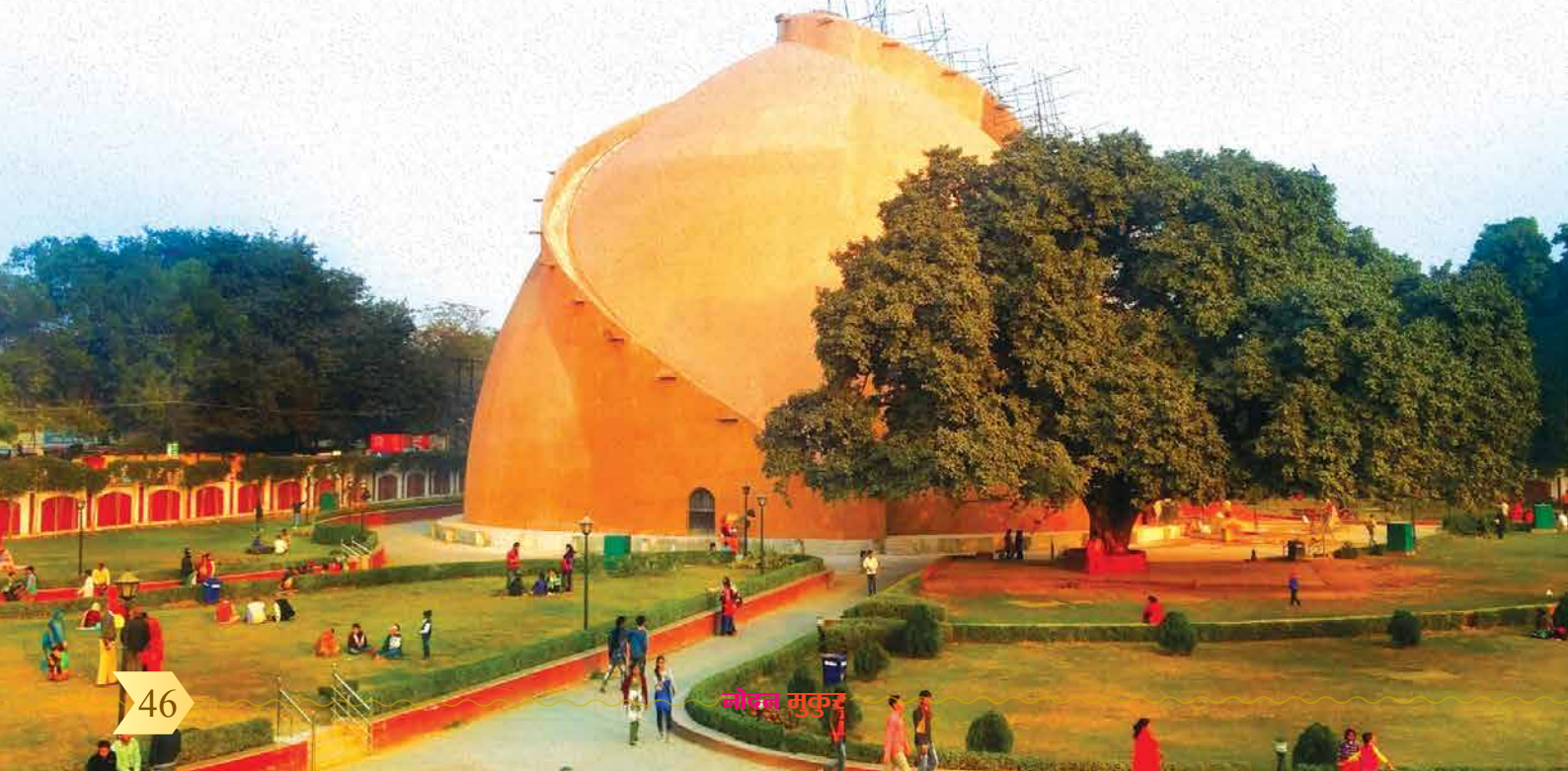

इसका आकार 125 मीटर है, वहीं गोलघर की दीवारें आधार में 3.6 मीटर चौड़ी हैं। इसके साथ ही गोलघर के शिखर पर करीब 3 मीटर तक ईंट का इस्तेमाल नहीं किया गया है, बल्कि इसके बजाय पत्थरों का उपयोग किया गया है। गोलघर के सबसे ऊपरी हिस्से पर दो फीट 7 इंच व्यास का होल अनाज डालने के लिये छोड़ा गया था, जिसे बाद में भर दिया गया। गोलघर में 1,37,000 टन अनाज भंडारण करने की क्षमता हैं, लेकिन आज तक इसमें कभी पूर्ण रूप से अनाज भरे नहीं गए हैं। पूर्ण रूप से नहीं भरने के पीछे एक और वजह है कि, इसके बारे में यह भी माना जाता है कि किसी इंजीनियरिंग खामी की वहज से इस ऐतिहासिक इमारत के गेट अंदर की तरफ खुलते हैं। वहीं अगर इसको पूरी तरह भर दिया जाए, तो इसके गेट नहीं खुलेंगे।

उपेक्षा

कहा जाता है कि गोलघर का निर्माण भले ही गोदाम बनाने के उद्देश्य से करवाया गया हो परंतु कालांतर में यह पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बन गया। देख-रेख के अभाव में इसकी दीवारें और सीढ़ियाँ टूटने लगी थीं। निर्माण के 227 वर्ष बाद इसकी मरम्मत करवाई गई। गोलघर के पूर्वी और दक्षिणी दरवाजे की ऊपरी दीवारों पर आई खतरनाक दरारों को सुर्खी, चूने, गुड़ और गोंद से भरा गया है। 'पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग' के अधिकारी मानते हैं कि सरकार ने इस स्मारक पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया है। कहा गया कि वर्ष 1979 में राज्य संरक्षित स्मारक तो इसे घोषित कर दिया गया, परंतु स्मारक के चारों ओर बढ़ी आबादी और सड़कों के निर्माण से स्मारक प्रभावित हुआ। कहा जाता है कि भवनों के निर्माण से भी गोलघर की नींव और दीवारें प्रभावित हुईं।

इस ऐतिहासिक स्मारक को सहेजने के लिए हाल के दिनों में सरकार ने कई कारगर पहल की है। गोलघर में लेज़र लाइट एवं शो की व्यवस्था की गई है। इसके शुरू होने से जहां गोलघर परिसर में स्वच्छता हो गई है वहीं कई निर्माण-कार्य भी करवाए गए हैं। यही कारण है कि आज पर्यटक एक बार फिर पटना की पहचान, गोलघर की ओर खींचे चले आ रहे हैं।

इस ऐतिहासिक इमारत की संरचना गोलाकार होने के कारण ही इसका नाम गोलघर पड़ा है। 2017 में इसकी एक बार मरम्मत की गई। अगर आप ऐतिहासिक जगहों के घूमने के शौक़ीन हैं तो आप गोलघर का भ्रमण कर सकते हैं।

कैसे जाएँ?

पटना भारत के प्रमुख शहरों में से एक है और बिहार की राजधानी है, इसी कारण यहाँ पहुँचने के साधन आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। आप यहाँ ट्रेन, बस या हवाई जहाज से आसानी से पहुँच सकते हैं। यहाँ ठहरने के लिए भी सस्ते होटल उपलब्ध हैं। जब आप किसी भी काम से पटना पहुँचें तो गोलघर का भ्रमण अवश्य करें।

श्वेता कुमारी
सुपत्नी - श्री त्रिभुवन प्रसाद सिंह
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

धरती माता

हे वसुंधरा धरती माता,
तेरी संतान है जग सारा,
जग में ही है इंसान यहाँ,
जो दिये दर्द तुमको सारा।

जननी तू सारे प्राणी की,
इसमें अभिमानी इंसान बना,
क्षत-विक्षत कर रहा तेरा आँचल,
तेरे क्रोध से वो अनभिज्ञ बना।

माता तेरे हरे आँचल को,
काट कर पत्थर बना डाला,
सीने में छेद कर तेरा,
रक्त तक बहा डाला।

माता तुमने संकेत दिये,
जो समझकर भी अंजान बना,
तेरी छुटती साँसों के वो,
दर्द से कोसों दूर रहा।

इंसान हो तुम, जग के श्रेष्ठ प्राणी,
धरती माता का ध्यान धरो,
जिसने तुमको पाला है,
उसको तुम ना बर्बाद करो।

तुम कर सकते हो सबकुछ,
जो तुम चाहते हो,
धरती को कष्ट पहुँचाए बिना,
तुम और उन्नत हो सकते हो।

तो आज से तुम संकल्प करो,
कि जो तुम कोई काम करो,
धरती माता का ध्यान प्रथम,
तुम उसके दर्द को याद करो।

हरियाली की चादर फैला,
आँचल फिर से हरा कर दो,
वसुंधरा धरती माता के,
तुम प्रिय संतान बनो।

हिंदी भाषा का उद्‌भव

जितेन्द्र कुमार ठाकुर
तकनीकी सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

हिंदी भाषा की उत्पत्ति संस्कृत से हुई है। इसे संस्कृत की उत्तराधिकारिणी भाषा भी कहा जाता है। संस्कृत भाषा का काल 1500 ई० पू० माना गया है। इस समय दो प्रकार की संस्कृत पाई जाती थी।

(क) वैदिक संस्कृतः- इसे देवभाषा या देववाणी भी कहा जाता था। यह संस्कृत का शुद्ध रूप था। वेदों तथा उपनिषदों की रचना वैदिक संस्कृत में हुई हैं।

(ख) लौकिक संस्कृतः- यह बोलचाल की संस्कृत थी। जिसे आजकल Classical Sanskrit कहा जाता है। कई कवियों ने अपनी रचनाएँ इसी संस्कृत में की हैं। रामायण तथा महाभारत-जैसे ग्रंथ लौकिक संस्कृत में लिखे गये हैं।

समय के साथ भाषा में परिवर्तन आता गया और 500 ई० पू० तक आते-जाते इसने पालि भाषा का रूप ले लिया। बौद्ध ग्रंथ अधिकतर पालि भाषा में ही लिखे गए हैं, न कि संस्कृत में। पालि भाषा का काल 500 ई० पू० से लेकर पहली शताब्दी तक माना गया है। इसी समय कुछ प्रमुख बोलियाँ भी बोली जाती थीं - जैसे, पूर्वी, पश्चिमोत्तरी, मध्यदेशी तथा दक्षिणी। पहली शताब्दी के शुरुआत से ही पालि भाषा ने परिवर्तित होकर प्राकृत भाषा का रूप ले लिया। प्राकृत भाषा का अर्थ है - वह भाषा जो सहज ही बोली और समझी जाए। कहा जाता है कि पालि भाषा के कुछ शब्द जो उच्चारण में बहुत कठिन थे उनके स्थान पर नए परिवर्तित शब्दों को लाया गया जो आसानी से बोले और समझे जा सकते थे। ये शब्द प्राकृत भाषा का रूप ले लिए। जैन साहित्य की रचनाएँ प्राकृत भाषा में ही की गईं।

इस समय (पहली शताब्दी से 500 ई० तक) छह (6) प्रमुख बोलियाँ थीं जो आगे चलकर हिंदी तथा अन्य भाषाओं की उत्पत्ति का कारण बनीं।

(1) शौरसेनी (2) पैशाची (3) ब्राचड़ (4) मागधी
(5) अर्धमागधी (6) महाराष्ट्री

500 ई० से 1000 ई० तक के काल को अपभ्रंश काल कहा जाता है। अपभ्रंश का अर्थ होता है बिगड़ी हुई बोली। इस काल में ऊपर वर्णित छहों बोलियों का प्रयोग कवि तथा लेखक कविताओं तथा किस्सों में अपने-अपने ढंग से करने लगे। हिंदी भाषा का काल अपभ्रंश के बाद ही माना जाता है, जिस काल में उपर्युक्त तीन अपभ्रंश बोलियाँ नामतः शौरसेनी, मागधी तथा अर्थ मागधी का हिन्दी के उद्‌भव में महत्वपूर्ण योगदान रहा। पैशाची अपभ्रंश से पंजाबी भाषा, ब्राचड़ अपभ्रंश से सिंधी भाषा तथा महाराष्ट्री अपभ्रंश से मराठी भाषा का विकास हुआ। अपभ्रंश की सरल और देशी बोलियों के शब्दों को अवहट्ट कहा गया है। अवहट्ट को अपभ्रंश और हिंदी के बीच की कड़ी कहा जाता है। विद्यापति की रचना "कीर्तिलता" में अवहट्ट के बारे में बताया गया है।

देसिल बयना सब जन मिट्ठा।
ते तइसन जम्पओ अवहट्ठा।।

जब भारत में मुगल आये तो मुगलों द्वारा लाई गई भाषा फारसी का भी हिंदी में समावेश हुआ। कुछ अंग्रेजी के शब्दों को भी हिंदी में शामिल किया गया। इससे यह पता चलता है कि हिंदी बहुत ही लचीली भाषा है, अतः इसका भविष्य उज्जवल है। स्वतंत्रता संग्राम के समय भी हिंदी भाषा में रचित काव्यों तथा समाचार-पत्रों ने लोगों को प्रेरित किया। आजादी के बाद 14 सितंबर 1949 को हिंदी राजभाषा के रूप में अंगिकार की गई।

हिंदी के पितामह कहे जाने वाले "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" के शब्दों में स्व-भाषा के संबंध में कहा गया है:

निज भाषा उन्नति रहे, सब उन्नति के मूल।
बिनु निज-भाषा ज्ञान के, रहत मूढ़ के मूढ़।।

नीचे दी गई सारिणी में हिंदी की पूर्ववर्ती बोलियों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है।

भाषा	अपभ्रंश	उपभाषाएँ	बोलियाँ
हिंदी	शौरसेनी	पश्चिमी हिंदी	• रवड़ी बोली/कौरवी • ब्रजभाषा • हरियाणवी • बुंदेली • कन्नौजी
		राजस्थानी	• मेवाती • जयपुरी • मालवी • मारवाड़ी
		पहाड़ी	• कुमाऊँनी • गढ़वाली
	मागधी	बिहारी	• भोजपुरी • मगही • मैथिली
	अर्ध मागधी	पूर्वी हिंदी	• अवधी • बघेली • छत्तीसगढ़ी

सरलता

कुशाग्र सक्सेना
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

कौन कहता है कि सोच जटिल होनी चाहिए।
कौन कहता है कि गंभीर पटल होना चाहिए।
मानो मेरी बात तो, सरल बनो, सरल बनो...

देखा है कभी नदी को, कैसे अविरल बहती है।
ठंडी पुरवाई को जिया है, जब वह मद्धम बहती है।
शांतिदूतों को सुनो तुम, वाणी अनुशासित रहती है।
प्रतिनिधित्व जो करो तो, न कभी जटिल बनो।
मानो मेरी बात तो, सरल बनो, सरल बनो...

हों जड़ें मज़बूत जिनकी, वो न तूफानों से डरते।
आत्मविश्वास से लबालब, पक्ष अपना सुदृढ़ रखते।
एवं आत्मसंयम से भी, स्वयं को प्रबल रखते।
हो परिस्थिति विषम तो भी, न कभी जटिल बनो।
मानो मेरी बात तो, सरल बनो, सरल बनो...

मानसिकता के हैं सब खेल, स्वयं को स्थिर रखो।
प्राथमिकता क्या है क्या नहीं, शांत चित्त निर्णय रखो।
भूत में अब न उलझकर, सोच दूरदर्शी रखो।
आचरण से ही व्यक्तित्व है, न कभी जटिल बनो।
मानो मेरी बात तो, सरल बनो, सरल बनो।

जेम कार्यक्रम पर व्याख्यान

सरकारी स्कूल करिपुर को डेस्कों और बेंचों की सुपुर्दगी

राजभाषा नीति पर अभिमुखीकरण कार्यक्रम

सड़क पर प्रतिरक्षात्मक वाहन-चालन पर व्याख्यान

सुरक्षा सप्ताह का उद्घाटन समारोह

मेरी पत्नी की सौतन

राजीव वर्मा
वैज्ञा./इंजी. एस डी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

मेरी दूसरी शादी की सालगिरह आने वाली है। मेरी नई पत्नी बहुत ही खूबसूरत, शालीन, दयालु और नेकदिल इंसान है। जाहिर-सी बात है, जब एक सुदंर स्त्री में बुद्धिमत्ता के गुण मिल जाते हैं तब कोई मूर्ख या ऋषि-संत ही होगा जो शादी करने से मना करेगा। इसी तरह सभी रीति-रिवाजों के साथ दोनों परिवारों की उपस्थिति में हमारी शादी भयानक महामारी के दिनों में संपन्न हुई।

मेरी नई पत्नी की नेकदिली का उदाहरण तो देखिए-वो हर दिन मुझे अच्छे से तैयार करके खाना खिलाकर, भरी हुई आँखों के साथ गले लगाकर मुझे विदा करती है। विदा करती है मुझे अपने सौत के पास जाने के लिए। विदा करती है वह मुझे उसके साथ रहने के लिए और इतना ही नहीं, वह अपनी होंठों पर मुस्कान के साथ विदा करती है, वापस आने के लिए। मैं उसके सौत के घर से जल्द-से-जल्द लौटूँ, क्योंकि वह बखूबी समझती है कि मुझे दोनों से प्यार है। लेकिन नई वाली पुरानी वाली से अधिक समझदार और वफ़ादार है।

इसी कारणवश, मैं नई वाली से ज्यादा प्रेम रखता हूँ। पहली शादी के छः साल बीतने वाले हैं। शुरुआती दौर में मैं खुश था। गौर कीजिएगा कि मैं खुश था-इसलिए नहीं कि सब अच्छा और बढ़िया था, इसलिए कि कुछ नया था। परंतु धीरे-धीरे उस रिश्ते की असलियत के धागे एक-एक करके उधड़ने लगे और इसी के साथ उधड़ने लगे मेरी जिंदगी के तार। जब तक उधड़ रहे थे, मैं सिलने की कोशिश में लगा रहा। किंतु, जब वे उलझने लगे तब मैंने फैसला कर लिया कि अब नहीं, अब ज्यादा देर तक मैं इस अवस्था में जीवित नहीं रह सकता।

अपनी शादी को निरर्थक और खोखला पाकर एक बार तो मन में आया कि तलाक ही दे दूँ। मुझे कभी भी इसने इन छः सालों में प्यार के दो बोल नहीं बोले। पास बैठाकर मुझे समझने की कोशिश तक नहीं की। इसने जितना मुझे दिया उसका हिसाब रखा, एक-एक चीज़ का हिसाब-मेरे आने-जाने का हिसाब, यहाँ तक कि मेरी सोच का भी हिसाब। ज़िंदगी की तलाश में यहाँ इसके पास आया था, पर चार दिन की ज़िंदगी में इसने एक पल के सुकून के बदले मुझे ज़िंदगी भर की बेचैनी का तोहफा दे दिया है। इसे खुश रखने के लिए मैं रात-दिन प्रयासरत हूँ। पर किसी बेवफा की तरह मेरे एक भी जतन इसे दिखाई नहीं पड़ता है। अपने घर-परिवार, अपने गाँव की सड़क से दूर इसके ख़ातिर दूर देश चला आया और इसे इस बात की फिक्र तो छाड़ें, कभी इसे एहसास भी नहीं हुआ। मेरे उदास चेहरे, मेरी भावनाओं और मेरे खालीपन के लिए इसके पास कोई जगह नहीं थी। यह अपने हर काम को ऊपर और मेरे हर प्रयास को मेरा फर्ज़ करार कर उसे निरर्थक साबित कर देती थी। यह कभी नहीं समझती कि यह सिर्फ फर्ज़ नहीं। मैं स्वयं हूँ और इस **मैं** के साथ जुड़ा है, मेरा **जुनून**, मेरा **जज़्बा,** मेरी **क़ाबिलियत**, मेरे **जीवन का सार**, मेरी पूरी **मेहनत,** जो मैंने इसे पाने में लगा दी और बदले में क्या मिले... कुछ कागज़ के टुकड़े...

इसलिए मैंने अपनी नई पत्नी को अपनी ज़िंदगी में लाने का फैसला कर लिया और आज मैं उसका दीवाना हूँ। कोई भला किसी को इतना अपना कैसे मान सकता है? मैं कायल हूँ ना केवल उसके बाहरी सौंदर्य का, बल्कि उसके मानसिक सौंदर्य का, उसके दृढ़-विश्वास का और उसके अचूक-अटल भरोसे का, जो हर सुबह मुझे उसकी आँखों में दिखता है।

जी हाँ! वही, भरी हुई आँखों एवं मुस्कुराते होंठों के साथ,

जो हर सुबह अपने दिल पर पत्थर रख अपने सौत के पास जाने के लिए विदा करती है, हमेशा मुझसे कहती है-जल्दी उठा करो, वक्त से जाया करो, जिम्मेदार बनो, गुस्सा मत करो, अच्छी सुंदर मुस्कुराहट के साथ जाओ ताकि उसकी सौत को अच्छा लगे, अच्छा दिखूं और आसपास का वातावरण भी खुशनुमा हो जाए। और, उस खुशनुमे वातारण में, मैं भी थोड़े चैन-ओ-सुकून के साथ सांस ले पाऊं।

मैं आप सभी को बताना चाहूँगा कि मेरी पत्नी की सौत और कोई नहीं मेरा ऑफिस ही है और छः साल होने जा रहे हैं, मुझे इस कार्य-स्थल पर। कभी सुकून भरा पल नहीं जिया, मैंने। एक के बाद एक कई लक्ष्य सुपुर्द रहते हैं या कई लक्ष्य एक साथ चल रहे होते हैं और कुछ लक्ष्य तो ऐसे होते हैं जिन्हें प्राप्त करने में पूरी ज़िंदगी निकल जाए, तो भी यह कहा नहीं जा सकता कि वे लक्ष्य अपने अंजाम तक पहुँच पाएंगे या नहीं। ऐसे लक्ष्यों की प्राप्ति भी हमारे कंधों पर होती है, जिनका भार लेकर निरंतर हमें चलते रहना पड़ता है।

कंधों पर इतनी सारी जिम्मेदारियों के बोझ के बाद, शायद थोड़ी-सी ही जगह बचती है और कभी-कभी तो वह भी नहीं बचती कि मैं अपने परिवार की जिम्मेदारियों का कोई एक भी गट्ठर अपने कंधों पर उठा सकूं। जीवन का ग्राफ संतुलित करने के लिए मैं प्रयासरत हूँ और यह परम सत्य है कि यह ग्राफ लाख कोशिशों के बावजूद कोई ज्यादा समय के लिए संतुलित रख पाने में असमर्थ होगा। किंतु मुझे ऐसा महसूस होता है कि इस ग्राफ का झुकाव मेरी ज़िंदगी में पारिवारिक दायित्वों की तरफ कम होता चला गया है।

यहां ऑफिस में मुझसे भविष्य-निर्माण की कई नई-नई योजनाएँ पूछी जाती हैं - अल्पकालिक योजनाएँ, मध्यकालीक योजनाएँ, दीर्घकालीक योजनाएँ आदि। मैं पूरा वक्त देकर ये योजनाएँ बड़ी ही मेहनत, लगन और जतन से बनाता हूँ। फिर इन योजनाओं का मेरे ही ख़िलाफ हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। मुझे लगातार कटघरे में खड़ा करके सवाल-जवाब किया जाता है कि इन योजनाओं को मैं कब तक पूरा कर पाऊंगा और इतना ही नहीं, इस तरह के कई सवालों को लेकर मुझे कठघरे में खड़ा किया जाता है। भला कैसे संभव है कि जिसमें आपकी आत्मा बसती हो, आपका श्वास बसता हो उसे आप छोड़ दें और अधूरा तो कभी नहीं... इसलिए ही, मैं कभी-कभी थॉमस वुड्रो विल्सन, लियोनार्ड वाइट, हरबर्ट सिमोन और लूथर गुलिक से थोड़ा खफा-सा रहता हूँ। क्यों इन्होंने अपने नियमों को, लिखते वक्त इतना लंबा और निचले स्तर पर आते-आते इतना पेंचीदा कर दिया? इन सभी महान लेखकों और संस्थाओं को विकसित करने वाले अंग्रेजों ने अगर उनमें इंसानियत की भावनाओं को भी खास अहमियत देते हुए, कुछ ऐसे कमाल के नियम बनाए होते, तो हमारा समाज यांत्रिक तरक्की के साथ-साथ पारिवारिक, भावनात्मक तरक्की में भी आगे होता। इस प्रकार संस्थाओं में पारिवारिक खुशनुमे माहौल में जीवन जीने का मज़ा कुछ और ही होता। सोचते भी तो कैसे? उस समय प्रेम-विवाह ज्यादा प्रचलन में भी तो नहीं था। सुसंगत विवाह के ज़माने वाले दिमाग की उपज वर्तमान में हम सभी देख रहे हैं।

इतनी मेहनत, इतनी लगन और जोशो-जुनून के साथ अपनी वफा घोल कर अगर मैं एक नया व्यवसाय खोल लिया होता तो शायद जीवन में इस दोराहे पर खुद को खड़ा नहीं पाता। हाँ, परेशानियाँ वहाँ भी होती पर मेरी वफा पर शक नहीं होता। मेरी मेहनत का मुनाफ़ा हर रोज मुझे मिलता। हर सुबह हर वक्त मैं स्वयं को संतुष्ट कर पाता, बजाय दूसरों को संतुष्ट करने के। किसी भी सरकारी, गैर-सरकारी या व्यावसायिक संस्था को चलाने के लिए आज्ञा देने वाला अगर एक ही हो तो वह संस्था सुचारू रूप से विकास की ओर अग्रसर होती है और अगर ये दोनों की कमान आपके हाथों में हैं तथा आपको खुद पर पूरा विश्वास है, तो आपको कोई रोक नहीं सकता। आपका पूर्ण विकास संभव है।

इसी कारणवश, मैं सोचता हूँ कि सरकारी नौकरी एक सुसंगत विवाह की तरह है। आपने अपनी इच्छानुसार पढ़ाई कर ली, देखने में जो सुंदर लड़की-रूपी संस्था मिली, उससे अपनी कुंडली अर्थात् अपनी शैक्षणिक योग्यता का मिलान कर शादी के बंधन में बंध गए और हद तो तब हो गई जब इसमें बॉन्ड रूपी गहरा संबंध जोड़ दिया गया। क्योंकि लड़की-रूपी यह संस्था सुंदर है, सुशील है, इसका समाज में काफी रुतबा है और लोग ऐसे विवाह को ज्यादा मान्यता देते हैं, इसलिए इसे तोड़ने-छोड़ने में कई बाधाएँ आती हैं और यह संस्था सुसंगत विवाह की तरह ज़िंदगी के भी स्वाद चखाती रहती है।

वहीं व्यवसाय की नई शुरुआत में प्रेम-विवाह जैसा नियम है-जब तक जिससे दिल न मिले, आगे बढ़ते रहो, धोखा और ठोकर खाकर एक-न-एक दिन खिलाड़ी बन ही जाओगे और कुछ न हुआ तो कम-से-कम दिल में कोई मलाल या कसक तो नहीं रहेगी। पूरे तजुर्बे और चैन की साँसों के साथ ज़िंदगी का मजा लिया जा सकता है।

डॉ. अशवती एस
वैज्ञा./इंजी एस डी,
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

स्वर्ण जयंती पुस्तकालयः एक परिचय

प्रस्तावनाः पुस्तकालय शब्द 'पुस्तक' और 'आलय' दो शब्दों के योग से बना है, जिसका सामान्य अर्थ है - पुस्तकों का भंडार गृह। वह भवन या स्थान जहाँ भिन्न-भिन्न विषयों की पुस्तकों का संग्रह जनसामान्य के अध्ययन के लिए किया जाता है, वह पुस्तकालय कहलाता है। पुस्तकालय आजकल विभिन्न रूपों में मौजूद है, जिसमें 'पी-बुक्स' के साथ-साथ ई-पुस्तक भी शामिल हैं तथा कई पुस्तकालय ऑनलाइन या वर्चुअल मोड में पुस्तक प्रेमियों को अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं।

एल पी एस सी का पुस्तकालय विशिष्ट पुस्तकालय (Special Library) की श्रेणी में आता है, जो प्रतिष्ठान की स्थापना के प्रारंभ से ही विद्यमान है। प्रारंभिक चरण में यह पुस्तकालय छोटे स्तर पर था, लेकिन समय के साथ संसाधनों और कार्यबल में वृद्धि से आज यह बृहद् रूप ले चुका है। पुस्तकालय विज्ञान के पाँचवे सिद्धांत के अनुसार, पुस्तकालय एक प्रगतीशील जीव है (Library is a growing organism)। पुस्तकालय में बढ़ोतरी का तात्पर्य है-इसमें पुस्तकों की संख्या, संसाधनों की संख्या एवं कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि तथा स्थान-विस्तार। एल पी एस सी के पुस्तकालय का सतत विकास होता रहा और जैसे-जैस यहाँ कर्मचारियों की संख्या बढ़ती गई, वैसे-वैसे एक बृहद स्तर पर पुस्तकालय निर्माण की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इसलिए पुस्तकालय के लिए एक सर्व-सुविधा संपन्न भवन के निर्माण का प्रस्ताव रखा गया।

एल पी एस सी के स्वर्ण जयंती पुस्तकालय का निर्माण-कार्य नवंबर 2018 में प्रारंभ हुआ था और निर्माण-कार्य पूर्ण होने के बाद इसका उद्घाटन, 08 फरवरी 2021 को इसरो के निवर्तमान अध्यक्ष माननीय डॉ. के शिवन के कर-कमलों से हुआ। तीन-मंजिले इस भवन का कुल क्षेत्रफल 2473 वर्गमीटर है जिसमें से लगभग 1725 वर्गमीटर का क्षेत्र पुस्तकालय के लिए तथा शेष स्थान संगोष्ठी कक्ष के रूप में विनिर्दिष्ट है।

स्वर्ण जयंती पुस्तकालय की विशेषताएँः

सूचना डेस्कः यह सूचना डेस्क पुस्तकालय के प्रवेश द्वार पर स्थित है जहाँ अध्येताओं को पुस्तकालय उपयोग से संबंधित सभी सूचनाएँ एक साथ उपलब्ध हो जाती हैं, इस प्रकार यह उन्हें एकमुश्त समाधान प्रदान करता है। सूचना डेस्क पर पुस्तकों का लेन-देन तो किया ही जाता है, साथ ही यहाँ आन्तरिक दस्तावेजों को रिपोर्ट-संख्याएँ भी प्रदान की जाती हैं।

हॉबी कॉर्नर: हॉबी कॉर्नर कर्मचारियों की सृजनात्मकता अभिव्यक्त करने की एक सुविधा है। यहाँ कर्मचारी अपने हॉबी जैसे-फोटोग्राफी, स्टाम्प संकलन, चित्रकला इत्यादि एक निश्चित समय तक प्रदर्शित कर सकते हैं।

खुला पठन क्षेत्र: यह जगह आरामदायक कुर्सियों से सुसज्जित है जहाँ काँच की खिड़कियों से प्रकृति की रमणीय हरी-भरी छटा दृष्टिगोचर होती है। यहाँ पुस्तकालय प्रेमी पत्रिकाओं और पुस्तकों के वर्तमान संस्करण पढ़ सकते हैं। यहाँ बैठकर पुस्तकालय प्रेमी पत्रिकाओं की टेबल प्रति और "न्यू बुक डिस्प्ले" की पुस्तकें पढ़ सकते हैं। साथ ही यहाँ लैपटॉप जैसे उपकरणों का प्रयोग करने की सुविधा भी उपलब्ध है, जिससे ऑनलाइन संसाधनों का भी लाभ उठाया जा सकता है।

वर्चुअल रिएलिटी हब: यहाँ उच्च श्रेणी के दो कंप्यूटरों के साथ ही त्रिआयामी रूप में विडियो प्रदर्शित करने के लिए हेडसेट भी उपलब्ध कराए गए हैं, जिनकी सहायता से उपयोगकर्ता अंतरिक्ष-संबंधी विडियो त्रिआयामी रूप में देख सकते हैं। यह दर्शकों को अंतरिक्ष गतिविधियों का अनुभव प्रदान करता है। चंद्रयान मिशन, अंतरिक्ष संचार आदि से संबंधित वीडियो यहाँ देखे जा सकते हैं।

नॉलेज कैप्चरिंग स्टूडियो: यहाँ बीस लोगों तक के छोटे समूह को बैठने की सुविधा प्रदान की गई है। कैमरा और नेटवर्क से युक्त इस कमरे में "ह्युमन लाइब्रेरी" (Human Library) यानी मानव-पुस्तकालय जैसे कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। मानव पुस्तकालय में एक अनुभवी व्यक्ति केंद्र-बिन्दु में होता है जो अपने अर्जित अनुभवों को वहाँ उपस्थित जिज्ञासुओं के साथ साझा करता है। इस कार्यक्रम में एक वरिष्ठ व्यक्ति अपने अनुभवों को प्रतिभागियों के साथ साझा करता है तथा प्रतिभागियों एवं वक्ता के बीच प्रश्नोत्तरी के रूप में संवाद होता है। पूरे कार्यक्रम की वीडियो रिकॉर्डिंग कर इसे डिजिटल लाइब्रेरी में अपलोड किया जाता है जिसका लाभ अन्य कर्मचारी उठा सकते हैं। यह एक तरह का नॉलेज केप्चरिंग ही है।

तकनीकी ब्राउज़िंग: यहाँ एक एल ए एन (Local Area Network) से युक्त कुछ कंप्यूटर संस्थापित किये गये हैं जिनपर प्रतिबन्धित दस्तावेजों और आंतरिक रिपोर्टों की ब्राउज़िंग की सुविधा है। यहाँ इन दस्तावेजों की ब्राउज़िंग की ही अनुमति है, इनकी डॉउनलोडिंग, कॉपिंग, प्रिंटिंग आदि की अनुमति नहीं है।

अनुसंधान कक्ष: पुस्तकालय के सबसे ऊपरी मंजिल पर 2 शोध कक्ष हैं जहाँ 5-6 व्यक्तियों के छोटे समूह के लिए तकनीकी चर्चा की सुविधा उपलब्ध है। यहाँ कंप्यूटर और इंट्रानेट सुविधाएँ भी दी गई हैं।

नालंदा हॉल: स्वर्ण जयंती पुस्तकालय के सबसे निचले तल पर नालंदा हॉल स्थित है, जिसमें एक साथ 300 लोगों के बैठने की सुविधा है। विडियो सम्मेलन युक्त इस हॉल में उच्चस्तरीय बैठकें-जैसे अध्यक्षीय समीक्षा बैठकें, अंतर-केंद्रीय बैठकें आदि आयोजित की जाती हैं।

पुस्तकालय के संसाधन एवं सेवाएँ: स्वर्ण जयंती पुस्तकालय प्रिंट, डिजिटल और ऑनलाइन शोध संसाधनों से सुसज्जित है। यहाँ मुख्य रूप से तकनीकी पुस्तकों का ही संकलन किया गया है, तथापि कुछ सामान्य ज्ञान की पुस्तकें भी यहाँ देखी जा सकती हैं।

दस्तावेज कक्ष: दस्तावेज कक्ष का विस्तार पुस्तकालय के दो मंजिलों तक है। पहले तल पर पाठकों को जारी की जाने वाली पुस्तकें उपलब्ध हैं और उसके ऊपरी तल पर संदर्भ पुस्तकें हैं, जिन्हें पाठकगण वहाँ बैठकर पढ़ सकते हैं। इस के अलावा यहाँ स्वामी द्वारा प्रकाशित प्रशासनिक नियमावली से संबंधित पुस्तिकाएँ, कई हिंदी पुस्तकें और विभिन्न हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ संग्रहित हैं।

उधार दी जानेवाली पुस्तकों का 'यूनिवर्सल डेसिमल क्लासिफिकेशन' के अनुसार संख्यांकन किया गया है और वे विषयानुसार वर्गीकृत हैं। इस वर्गीकरण से किसी पुस्तक को ढूँढ़ने में सहूलियत होती है। साथ ही इन पुस्तकों को उनके विषयों के अनुसार विशिष्ट स्थानों पर रखा गया है, जिससे कोई अध्येता पुस्तक को आसानी से ढूँढ़ लेता है। उधार पुस्तकें एक महीने के लिए ऋण पर दी जाती हैं। एक व्यक्ति एक बार में चार पुस्तकें और चार पत्रिकाएँ ले सकता है। किसी अध्येता के लिए पुस्तकालय से आहरित पत्रिकाओं को वापस करने की अवधि एक हफ्ते की होती है।

पुस्तकों के अलावा यहाँ कई मानक पुस्तकें और रिपोर्टें भी रखी गई हैं। इसके अलावा, तकनीकी और सामान्य पत्रिकाएँ इनमें शामिल हैं। ये पत्रिकाएँ अध्येता को ऋण स्वरूप दी जाती हैं। जर्नल अनुभाग में प्रत्येक पत्रिका की फुटकर प्रतियाँ तथा वर्षभर एकत्रित उन फुटकर प्रतियों की जिल्दबंद पोथियाँ वर्गीकृत करके रखी गई हैं।

डिजिटल लाइब्रेरी: विशिष्ट संसाधनों का संकलन डिजिटल लाइब्रेरी में किया गया है। यह डिजिटल लाइब्रेरी एल डी डी के वेबसाइट पर होस्ट किया गया है। इसमें अनेक प्रकार की रिपार्टें जैसे - नासा-टी एम, नासा-टी आर तथा मानक रिपोर्टें जैसे - ए एम एस (AMS), ए एस टी एम (ASTM) आदि एवं कई संगोष्ठियों के लेख शामिल किये गये हैं। इन में LEPC, JPC, ISTS, IAF, ILASS इत्यादि मुख्य संगोष्ठियों के लेख सम्मिलित किये गये हैं। इनके अलावा इसमें 'निर्बाध प्रवेश' वाली कई तकनीकी ई-पुस्तकें भी शामिल की गई हैं।

एल पी एस सी रिमोट एक्सेस: 'अंतरिक्ष ज्ञान' नामक एक इसरो पुस्तकालय संघ (ISRO Library Consortium) है जिसका रख-रखाव इसरो मुख्यालय द्वारा किया जाता है। एल पी एस सी पुस्तकालय भी इस संघ (Consortium) में शामिल है, जिसमें कई प्रकार के इलैक्ट्रॉनिक संसाधन खरीद कर रखे गये हैं। ये संसाधन अहर्निश कहीं से भी एक्सेस किये जा सकते हैं। यानी उपयोगकर्ता कहीं भी बैठकर, घर पर या यात्रा के वक्त अपने मोबाइल या कंप्यूटर पर इन लेखों, पत्रिकाओं का अध्ययन कर सकते हैं। यह 'रिमोट एक्सेस' (Remote Access) नामक एक सॉफ्टवेयर से संभव हो पाता है।

निम्नलिखित ऑनलाइन संसाधन एल पी एस सी रिमोट एक्सेस में शामिल हैं:

- आई ई ई ई एक्सप्लोर (IEEE Xplore)
- आई ई टी डिजिटल लाइब्रेरी (IET Digital Library)
- ए आई ए ए जर्नल्स (AIAA Journals)

- ए सी एस डिजिटल लाइब्रेरी (ACS Digital Library)
- स्प्रिंगर ई-पुस्तकें (Springer E-books)
- टेलर एवं फ्रांसीस ई-पुस्तकें (Taylor & Francis E-books)
- आई ओ पी ई-पुस्तकें (IOP E-books)

वेब ओपैक (Web OPAC): वेब ओपैक का तात्पर्य है ऑनलाइन पब्लिक एक्सेस पूस्तक सूची (Online Public Access Catalogue), जिसे एल डी डी साइट पर द्वारा एक्सेस किया जाता है। वेब ओपैक से पुस्तकालय के सभी संसाधनों की खोज की जा सकती है। उपयोगकर्ता पुस्तकालय में उपलब्ध संसाधनों के मेटा-डाटा (Meta Data) और उसकी उपलब्धता की खोज कर सकते हैं। यदि एक पुस्तक किसी को ऋण पर दिया गया है तो दूसरे व्यक्ति के लिए उसे 'रिजर्व' यानी 'होल्ड' पर रखा जा सकता है, ताकि उस पुस्तक की वापसी के बाद ई-मेल से पुस्तक की उपलब्धी की सूचना उसे मिल सके। वेब ओपैक द्वारा विलंबित पुस्तकों का आहरण नवीकृत किया जा सकता है।

इन सभी के अतिरिक्त पुस्तकालय सूचना खोज सेवा (Information Search Service) भी उपलब्ध है, जिसके ज़रिए मांग के अनुसार और प्रत्याशित-दो प्रकार की सूचना खोज सेवाएँ पुस्तकालय प्रदान करता है।

पुस्तकालय के प्रकाशन: पुस्तकालय द्वारा सूचना प्रदान करने हेतु कई प्रकार के प्रकाशन निकाले जाते हैं जो निम्नवत है:

- क्विक अलर्ट्स (Quick Alerts)
- अंतरिक्ष समाचार (Space Tidbits)
- मिडिया रिस्पॉन्स (Media Response)
- स्पेस @ ए ग्लान्स (Space @a glance)
- लॉन्च लौग (Launch Log)

एल एवं एस सी लेक्चर्स (L&SC Lectures): कई विषयों पर तकनीकी भाषण पुस्तकालय द्वारा मासिक रूप में आयोजित किये जाते हैं। वक्ता मुख्य रूप से प्रतिष्ठान के ही अधिकारी होते हैं। कई बार अन्य सामान्य विषयों पर भाषण देने के लिए बाहर से विद्वान अतिथियों को आमंत्रित किया जाता है। इन सभी भाषणों के विडियो और प्रस्तुतीकरण डिजिटल लाइब्रेरी में भी रखे जाते हैं।

इस प्रकार एल पी एस सी का स्वर्ण जयंती पुस्तकालय सभी संसाधनों से परिपूर्ण है और यहाँ कार्यरत अधिकारियों/कर्मचारियों को तकनीकी एवं सामान्य साहित्य से जुड़ी पुस्तकों से रू-ब-रू कराता है।

किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं

सूरज अग्रवाल
वैज्ञा./इंजी. एस सी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

सवेरा हुआ, साँझ ढली
कुछ कही-अनकही बातें घर कर गईं,
दिल और दिमाग बना रहा एक अलग संसार,
अब इस सच को कैसे झुठलाऊं मैं
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

लाख कोशिशें कर लूँ मगर,
इस भयानक मनगढ़न्त जंजाल से अब
किस-किस को भूल जाऊं मैं
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

शोरगुल के अथाह सागर में,
सच और झूठ के इस कशमकश में,
किसको सही ठहराऊं मैं
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

किसने चाकू घोंपा है किसने चुभाई सूई,
कौन हैं अपना, कौन पराया अफवाह है भरपूर,
घायल मन के आगे सब हो गया चकनाचूर
अब क्यों अपना ध्यान हटाऊँ मैं
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

बात-बात में निकली बातें, जला गयी कई फुलझड़ियाँ,
फिर पूछे तुमको बुरा ना लागे, ये कैसी है मजबूरियां,
अब क्या-क्या बताऊँ मैं तुमको,
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

तू-तू मैं-मैं, तेरा-मेरा, यही है जीवन मेरे प्यारे,
जिसने इसको सिख लिया उसके हो गए वारे-न्यारे,
किस-किस को ये सब बताऊँ मैं
भीड़ के इस शोर में अब,
किस-किस से ख़फ़ा हो जाऊं मैं।

सुलजा लालु
सुपत्नी - श्री लालु नायर वी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

दहेज-प्रथा समाज का अभिशाप

शादी, हम सभी के सबसे महत्तवपूर्ण खुशियों में से एक है। शादी एक ऐसा बंधन है जिसमें विपरित लिंग के दो व्यक्तियों का मिलन होता है। भारतीय सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विवाह दो व्यक्तियों का मिलन है, जिसमें सिर्फ दो व्यक्तियों का ही नहीं बल्कि दो परिवारों की परंपराओं, रिवाजों और संस्कारों का मिलन होता है। दहेज को कई रूपों में परिभाषित किया जाता है - कोई इसे विवाहिता की देखभाल के लिए पुरुष को दिया जाने वाला पारिश्रमिक कहता है, तो कोई इसे महिला के जन्म की कीमत। दहेज की माँग वर-पक्ष द्वारा कभी खुलेआम की जाती है, तो कभी गुपचुप तरीके से।

लोगों के जीवन-स्तर और शिक्षा में उत्थान के बावजूद भारत में दहेज-जैसी दानवी कुप्रथा प्रचलित है। यह दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है? भारत में दहेज उत्पीड़न बढ़ रहा है। इस कड़वे सच को समझने की जरूरत है कि इसके अधिकांश मामले केरल में ही हैं। इस स्थिति में यह कहना बेमानी हो जाती है कि साक्षरता और जीवनशैली से हमारे विचार बदलते हैं। हममें से अधिकांश लोग मानसिक रूप से संकीर्ण हैं, जो स्वार्थ-सिद्धि के लिए कार्य करते हैं। वस्तुतः आए दिन ऐसी घटनाओं से रूबरू होना पड़ता है, जिससे हम सभी का सर शर्म से झुक जाता है। अन्याय के प्रति हम सभी मौन धारण कर लेते हैं, क्योंकि हम सभी कहीं न कहीं अकर्मण्यता और आलस्य के शिकार हैं। समाज में न जाने कितनी ही माताओं-बहनों ने दहेज के कारण मानसिक और शारीरिक प्रताड़नाओं से अपने जीवन का अंत कर लिया। दहेज-जैसी अमानवीय प्रथा के कारण हो रहे महिलाओं के शोषण और उत्पीड़न को शब्दों में व्यक्त करना मुश्किल है। ऐसा प्रतीत होता है पुरुष बिकाऊ हैं, बाजार में बिकने के लिए (किसी महिला से परिणय पाश में बंधने के लिए) जिनका मोल-भाव किया जाता है। यह स्थिति अत्यंत पीड़ादायक है।

वह दिन दूर नहीं जब महिला अपनी शक्ति और सामर्थ्य का एहसास करके ही शादी करेंगी। महिलाएँ भी काफी हद तक समाज में प्रचलित दहेज की कुप्रथा के लिए जिम्मेदार हैं। इस धारणा को बदलने की आवश्यकता है। दहेज के रूप में एक बड़ी राशि पति के परिवार में जगह पाने के लिए पर्याप्त नहीं है। कई महिलाओं की शादी हो जाने के बाद भी उनके ससुराल वाले उनके मायके वालों से दहेज की माँग कर उन्हें परेशान करते हैं और दहेज न देने पर तलाक तक की नौबत आ जाती है। हालाँकि दहेज प्रथा को एक सामाजिक बूराई के रूप में देखा जाता है, फिर भी लोग इसके खिलाफ बोलने से डरते हैं। क्योंकि उन्हें डर लगता है कि उनकी अपनी बहन या बेटी कहीं कुंवारी न रह जाए। वह डर ही है जिससे हर व्यक्ति किसी अन्याय के प्रति अपनी आँखें मूँद लेने के लिए विवश हो जाता है। दहेज न केवल समाज के लिए बल्कि देश के लिए भी सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। दहेज उत्पीड़न की समस्या का समाधान समाज के लोग एक

साथ मिलकर ही निकाल सकते हैं। यदि हम अपने समाज को दहेज की दानवी-प्रथा से मुक्त करना चाहते हैं तो हम सभी को मिलकर आवाज़ उठानी होगी, समाज में जागरूकता लानी होगी और इसे कानूनी रूप से समाप्त करने के लिए लड़ाई लड़नी होगी। यदि हम एक जुट होकर दहेज प्रथा के विरूद्ध लड़ेंगे तो ही दहेज के इस काले अध्याय का अंत होगा।

1961 में केन्द्र सरकार ने दहेज निषेध अधिनियम पारित किया। देश में ऐसे कानून की आवश्यकता इसलिए पड़ी, क्योंकि दहेज के लिए आज भी महिलाओं को उनके ससुराल पक्ष द्वारा उत्पीड़ित किया जाता है। साथ ही अतीत में कुछ ऐसी भयावह घटनाएँ घटी हैं जिससे मानवता शर्मसार हुई। कई महिलाओं को दहेज के लिए जिंदा जला दिया गया, तो कई मानसिक एवं शारीरिक उत्पीड़न का शिकार हुईं। इसके अलावा 2005 में घरेलू हिंसा निषेध अधिनियम पारित किया गया जो 2006 में लागू हुआ। इस कानून के होने के बावजूद यह प्रश्न उठता है कि इसके तहत कितने अपराधियों को अबतक दंडित किया गया है? यदि कानून सही तरीके से अपना काम कर रहा होता तो न जाने कितनी ही स्त्रियों की जानें बच गई हातीं।

मेरे यह कहने से ऐसा प्रतीत होता है मानो सारे पुरुष दहेज - लोलुप या स्वार्थी होते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। समाज में कुछ ऐसे भी लड़के हैं जो स्त्रियों का बहुत ही बेहतर ढंग से ख्याल रखते हैं। लेकिन कुछ ऐसे भी युवा हैं जो अपना वैवाहिक संबंध दहेज के लिए करते हैं। दहेज समाज का महाभिशाप है जिसे दूर करना हम सभी का समाजिक और नैतिक दायित्व है। समय आ गया है कि हम एक साथ मिलकर समाज और परिवेश में मानवोचित गुणों यथा सद्भाव, प्रेम और सहयोग की खूशबू फैलायें, जिससे यह मानव-मात्र के रहने के लिए बेहतर स्थान बन सके।

संक्षेप में यह कहना सर्वथा उचित होगा कि समाज महिलाओं की सुरक्षा और कल्याण के लिए अपना दृष्टिकोण बदले। बदलाव की बयार सभी को मिलजुल कर लानी होगी। समाज में नारी के प्रति सम्मान की भावना का संचार करने के लिए सम्मिलित प्रयास करने की आवश्यकता होगी। तभी देहज की प्रथा के दुष्प्रभावों से युवा पीढ़ी को बचाया जा सकता है। सद्विचार और सद्कार्यों की प्रेरणा देकर ही युवा पीढ़ी की मानसिकता को बदला जा सकता है ताकि वे दहेज-रूपी दानव के चंगुल से मुक्त रह सकें। दहेज-जैसी कुप्रथा के कारणों और दुष्प्रभावों को स्कूली पाठ्यक्रम में भी शामिल किया जाना चाहिए और बाल-मन को इसके दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक किया जाना चाहिए।

नन्हें कदम

पी. अनुश्री
वरि. अनुवाद अधिकारी
द्र.नो.प्र.कें., बेंगलूरु

तेरे नन्हें कदम पड़ते ही
ज़िंदगी में रौनक आ गई,
तेरे रोने से खुशी,
तेरी हँसी से खुशियों की लहर छा गई।

'अम्मा' कहकर तेरी पुकार ने,
न जाने क्या जादू कर दिया
तेरी शरारत ने मन का आलम भर दिया।

तेरी किलकारियों ने घर का माहौल बदल दिया
तेरे कौतूहल ने एक बार फिर हमें भी
सोचने के लिए मजबूर कर दिया।

तुम जब जागो तभी सवेरा, ऐसा माहौल बदल गया
तेरे हँसने से हँसी, तेरे रोने पर आँसू
क्या कहें, एक बार हमें भी, बच्चे में बदल दिया।

तेरे नन्हें कदम पड़ते ही
ज़िंदगी में रौनक आ गई,
तेरे रोने से खुशी,
तेरी हँसी से खुशियों की लहर छा गई।

कलासृष्टि

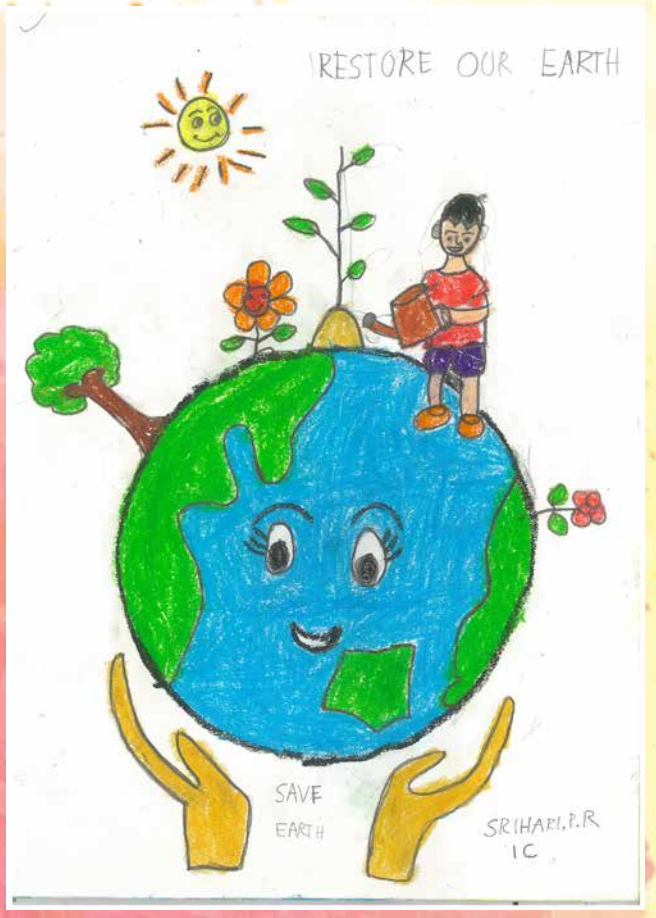

श्री हरी
सुपुत्र पद्म प्रभा
वैज्ञा/इंजी-एस सी
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

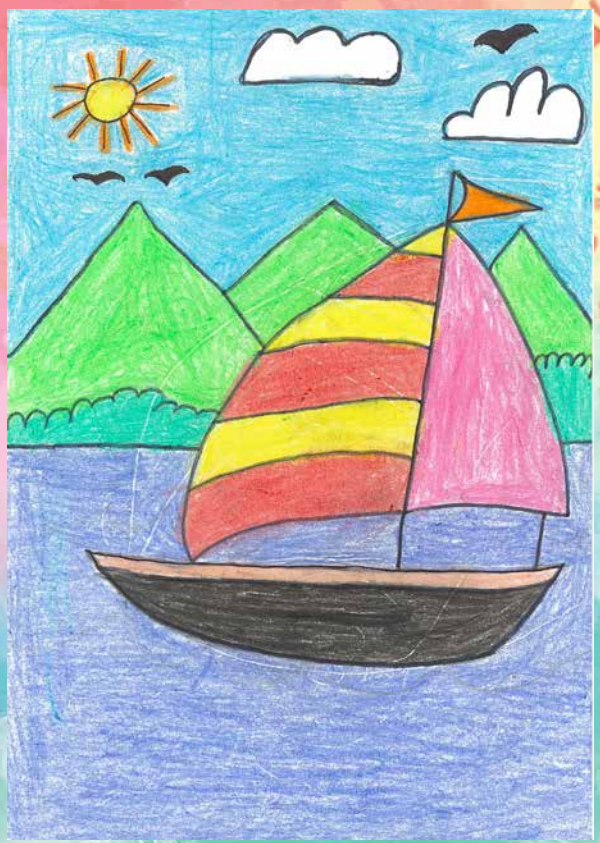

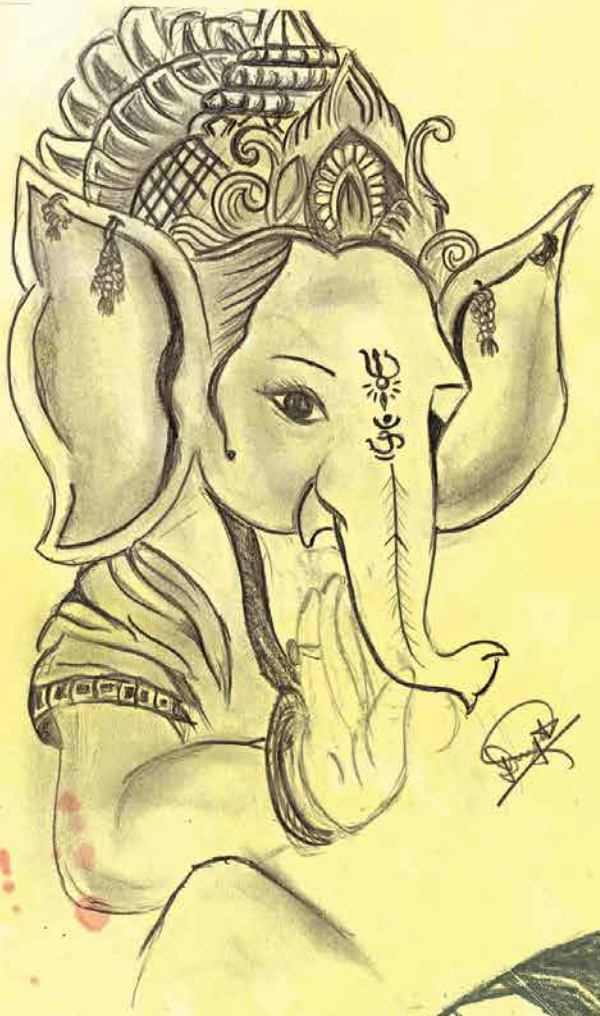

दिया नायर
सुपुत्री रम्या नायर
वैज्ञा/इंजी-एसई
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

कलासृष्टि

कलासृष्टि

कुमारी अभिरामी आर
सुपुत्री रम्या एस यू
वरि. सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

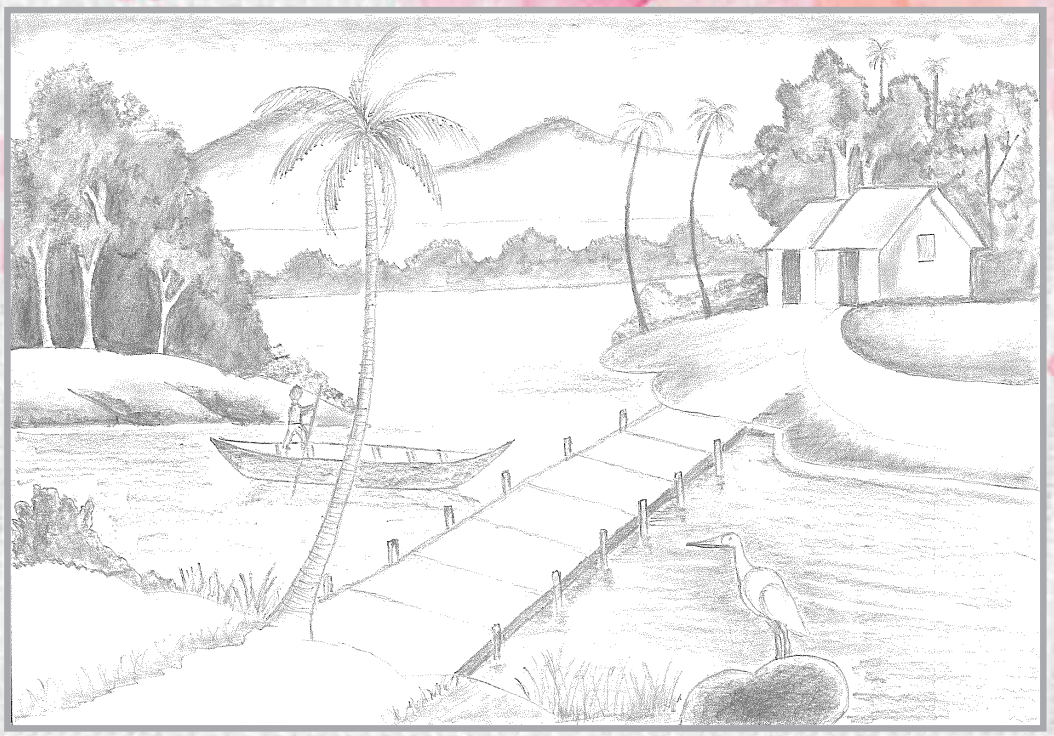

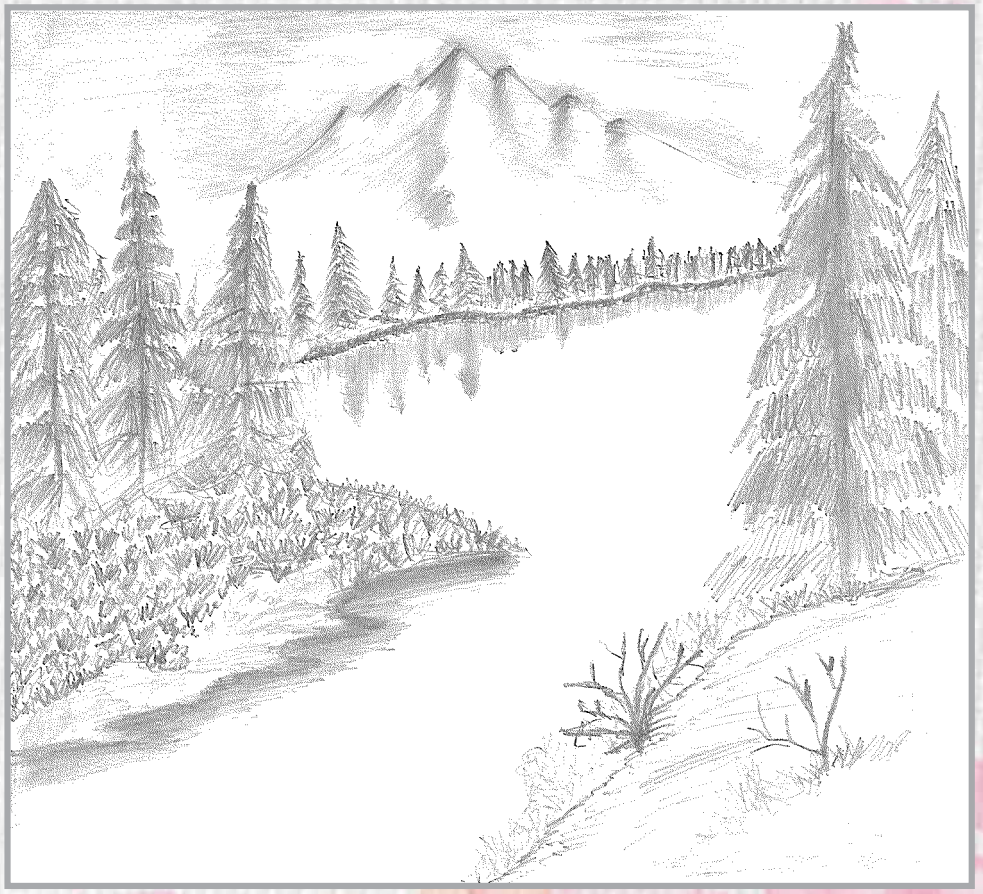

ऋषिकेश आर
सुपुत्र रम्या एस यू
वरि. सहायक
द्र.नो.प्र.कें., वलियमला

कलासृष्टि

एल पी एस सी में विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न कार्यक्रम

महापुरुषों द्वारा हिंदी भाषा संबंधी प्रेरक सूक्तियाँ

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गांधी

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

नरेंद्र मोदी (प्रधान मंत्री)

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से हिंदी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है।

अमित शाह (गृह मंत्री)

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

मदन मोहन मालवीय

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और उसे दृढ़ करती है।

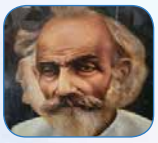

पुरूषोत्तम दास टंडन

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति की सरलतम स्त्रोत है।

सुमित्रानंदन पंत

हिंदी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है।

डॉ सम्पूर्णानन्द

भारतीय भाषाएँ नदियां हैं और हिंदी महानदी।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

हिंदी जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी

हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

स्वामी दयानंद

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है।

जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठाक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है।

पीर मुहम्मद मूनिस

देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से अत्यंत वैज्ञानिक लिपि है।

रविशंकर शुक्ल

हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।

डॉ राजेन्द्र प्रसाद

आप जिस तरह बोलते हैं, बात-चीत करते हैं, उसी तरह लिखा भी कीजिए। भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिए।

महावीर प्रसाद द्विवेदी

एल पी एस सी में हिंदी कार्यशाला

कोविड उपरांत तनाव एवं इससे संबंधित स्वास्थ्य-समस्याओं पर डॉ अरुण बी नायर का व्याख्यान

श्री उमामहेश्वरन आर, निदेशक, एच एस एफ सी का आधिकारिक दौरा

एस बी एफ मेरिट अवार्ड

एस बी एफ मेरिट अवार्ड

वलियमला

गणतंत्र दिवस 2022

बेंगलुरु